JUNI KHYAT

जूनी ख्यात

(इतिहास, कला एवं संस्कृति की शोध पत्रिका)

वर्ष : 5 अंक 2
वर्ष : 6 अंक 1
जनवरी–दिसम्बर 2016
(संयुक्तांक)

संपादक
डॉ. बी.एल. भादानी
पूर्व विभागाध्यक्ष
इतिहास विभाग,
अलिगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़

प्रबंधक संपादक
श्याम महर्षि

मरुभूमि शोध संस्थान
संस्कृति भवन
एन.एच. 11, श्रीडूंगरगढ़ (बीकानेर) राजस्थान

विज्ञापन एवं प्रचार-प्रसार :
राम उपाध्याय, श्रीडूंगरगढ़, बीकानेर

सम्पर्क सूत्र :
प्रबंध सम्पादक-श्याम महर्षि

प्रकाशकीय एवं विज्ञापन कार्यालय :
सचिव, मरुभूमि शोध संस्थान, श्रीडूंगरगढ़-331803 (बीकानेर) राज.
आजीवन सदस्यता 1000 रु.

सहयोग दरः
(व्यक्तिगत) चार अंक 300 रुपये ❑ एक अंक 75 रुपये
(संस्था) चार अंक 400 रुपये ❑ एक अंक 100 रुपये
बाहरी चैक के लिए 25 रुपये अतिरिक्त

विदेश :
(व्यक्तिगत) चार अंक-इंग्लैण्ड 40 पाउण्ड ❑ अमेरिका 50 डालर
(संस्था) चार अंक-इंग्लैण्ड 80 पाउण्ड ❑ अमेरिका 100 डालर

हवाई डाक :
इंग्लैण्ड 10 पाउण्ड (10) एवं अमेरिका 20 डालर अतिरिक्त

आजीवन शुल्क संस्था के निम्न खाते में सीधा ट्रांसफर किया जा सकता है।
1. Punjab National Bank
2. Sri Dungargarh
3. मरुभूमि शोध संस्थान
4. खाता सं. 3604000100174114
5. IFSC Code - PUNB0360400

धनादेश/ड्राफ्ट/नकद भुगतान भेजने का पता :
श्याम महर्षि
सचिव
मरुभूमि शोध संस्थान
(राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रचार समिति)
श्रीडूंगरगढ़ 331803 (बीकानेर) राज.
फोन : 01565-222670

आलेख मय सीडी में या ईमेल किया जा सकता है।

सम्पादकीय कार्यालय :
डॉ. बी.एल. भादानी
रागड़ी चौक, बीकानेर 334001 (राज.)
मो.-9950678920
ई मेल - bbhadani.amu@gmail.com

सम्पादकीय

हमारे अंक विलंब से निकलने का मुख्य कारण स्तरीय शोध आलेखों का अकाल रहा है। किसी आलेख में पादटिप्पणियां नदारद होती हैं तो किसी में अधूरी होती है। हमारी पत्रिका के रेफरी उनको सुधारने के निर्देश देते हैं तब शोधार्थी सुधार करके वापिस विलंब से भेजते हैं। इस तरह विलंब का सिलसिला प्रारंभ हो जाता हे। हम पूरा प्रयास कर रहे हैं कि इसी वर्ष के अंत तक इस विलंब से मुक्ति प्राप्त कर सकें।

आज के समय में इतिहास में शोधविषयों का निरन्तर विस्तार होता जा रहा है। विशेषतः जल संग्रहण की पद्धत्तियों एवं पर्यावरण पर विशेष बल दिया जा रहा है। इसके अतिरिक्त पुरातत्त्व एवं पुरातात्त्विक सर्वेक्षण पर भी बड़े स्तर पर शोधकार्य प्रगति पर हैं। ये अभिलेखों के विकल्प के रूप में उभर रहे हैं। अधिकांश विषयों एवं पक्षों के बारे में लिखित दस्तावेज मौन रहते हैं। वहां सर्वेक्षणों से प्राप्त साक्ष्य काफी सीमा तक इस कमी को पूरा करते हैं। इसलिए शोधार्थियों से निवेदन है कि नवीन विषयों पर अपने आलेख भेजने का कष्ट करें ताकि पत्रिका के पाठक लाभान्वित हो सकें।

सारे आलेख हमारे द्वारा निर्धारित प्रारूप के अनुसार ही भेजें ताकि सुधार की आवश्यकता कम से कम हो।

– बी.एल. भादानी

अनुक्रम

1.	भारतवर्ष में शक्तिमत की अवधारणा : एक ऐतिहासिक विश्लेषण – *डॉ. चन्द्रपाल सिंह*	05–18
2.	समकालीन काव्य–सर्जक एवं सिसोदिया नायक–महाराणा प्रताप – *बी.एल. भादानी*	19–25
3.	गोगुन्दा की स्थापना और नामकरण : मिथक एवम् तथ्य – *अजय मोची*	26–36
4.	बीकानेर अंचल के प्रमुख ऐतिहासिक शिलालेख – *स्व. डॉ. परमेश्वर सोलंकी*	37–40
5.	झझू ग्राम के कतिपय प्राचीन शिलालेख – *स्व. श्री मूलचन्द 'प्राणेश'*	41–44
6.	चूरू में छतरी निर्माण की परम्परा – पूर्वजों के प्रति कलात्मक श्रद्धा–सुमन – *डॉ. मुकेश हर्ष*	45–81
7.	समीक्षा : जोधपुर राज्य के अस्त्र–शस्त्र – *डॉ. विक्रम सिंह भाटी*	82–84

भारतवर्ष में शक्तिमत की अवधारणा : एक ऐतिहासिक विश्लेषण

● डॉ. चन्द्रपाल सिंह

शारीरिक बल, ज्ञान तथा सत्यता की प्रतिरूप शक्ति को हिन्दु सिद्धान्त के पांच मुख्य देवताओं में से एक माना जाता है। साधारणतः शक्ति इसके विस्तृत रूप में नारी देवताओं का प्रतिनिधित्व करती है। कालान्तर में शक्ति विभिन्न रूपों तथा आकारों के कारण भारतवर्ष में बहुत प्रसिद्ध रही है। यहां शक्ति को मातृ सिद्धान्त के रूप में विचारा गया जो कि स्वभावतः मातृदेवी के मत से जोड़ा गया था। शक्ति की इष्ट देव के रूप में पूजा इसकी पूर्ण उन्नति थी। इसकी पूजा की उत्पत्ति के लिए दो भिन्न दृष्टिकोणों से अध्ययन की आवश्यकता है। उनमें से एक भक्त का तथा दूसरा इतिहासकार का है। भक्त के दृष्टिकोण से शक्ति चाहे जो भी नाम हो – दुर्गा, काली, लक्ष्मी, सरस्वती, अम्बा आदि सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक तथा सर्वज्ञाता देवता है जो कि निश्चित रूप से भक्त की रक्षा करती है। वह इस संसार का निर्माण, रक्षण तथा भक्षण करने वाली है। वह अपने आप या उसके पुरुष सहभागी के साथ मिलकर इस विश्व का निर्माण करती है। वह अनादि तथा अन्त रहित देवता है। अतः शक्ति की उत्पत्ति या उसकी आराधना की समस्या विशुद्ध धार्मिक दृष्टिकोण से कभी भी नहीं रही है।

परन्तु धर्म तथा धार्मिक अभ्यासों के इतिहासकार के नाते जब कोई शक्ति पूजा पर चिन्तन करता है तो वह अपने आपको भिन्न स्थिति में पाता है। यहां इस शोध के द्वारा इन धार्मिक अभ्यासों का विश्लेषण, संस्कारों की उन्नति की कहानी, देवी की मूर्तियों की उत्पत्ति तथा उन्नति आदि कुछ क्षेत्रों के प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास किया गया है। साहित्यिक तथा पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर हम कह सकते है कि शक्ति मत उसी तरह से बहुत से मतों के एकत्रीकरण का परिणाम था। बहुत से विद्वानों का मत है कि शक्ति या मातृदेवी की प्राचीनता आरम्भिक सिन्धु घाटी सभ्यता के समकालीन है। उत्खननों में बहुत प्रकार की मिट्टी की बनी लघु स्त्री मूर्तियां तथा मुहरों पर उनके प्रतिरूप मिले हैं। यद्यपि लेखयुक्त मुहरों को सन्तोषजनक पढ़ना अभी बाकी है तथापि कुछ मुहरों पर मातृदेवी के प्रतीक की व्याख्या कुछ कारणों से की जा रही है। कुछ विद्वानों के अनुसार छल्लेनुमा पाषाण, बेलनाकार पाषाण के टुकड़े तथा योनि में स्थापित पाषाण लिंग, हड़प्पा कालीन स्थलों से उत्खनित, प्राचीन शिव–शक्ति अस्तित्व के प्रामाणिक प्रतीक हैं। हड़प्पा कालीन स्थलों से उत्खनित सामग्री जैसे कि पकी मिट्टी की छोटी प्रतिमाओं[1], मुहर ताबीजों[2] तथा छल्लेदार पाषाणों[3] से उक्त अनुमान सिद्ध होता है। इन मिट्टी की बनी लघु प्रतिमाओं में से एक नग्न मूर्ति विशेष सिरोभूषा तथा प्रत्येक कान में एक प्याला धुएं के धब्बों, जोकि तेल या धूप के जलने के कारण हुए थे, के साथ मातृदेवी[4] का प्रतिनिधित्व करती है। एक अन्य मुहर पर मातृदेवी को प्रसन्न करने के लिए मानव बलि की प्रथा को ढूंढा जा सकता

है। इस दृश्य में एक नर को हसियानुमा हथियार अपने हाथ में पकड़े एक स्त्री को धमकाते हुए दिखाया गया है। स्त्री को बैठे हुए, बाल बिखरे हुए तथा हाथों को फैलाए दया की भीख मांगते हुए दिखाया गया है। मुहर की दूसरी ओर एक नग्न स्त्री को उसके शरीर के ऊपर की दिशा को नीचे की ओर, उसके दोनों पैर एक दूसरे से दूरी पर तथा उसके गर्भ से एक पौधा निकलता हुआ दिखाया गया है। यह प्रजनन की देवी का एक विशेष दृश्यह है।[5]

वैदिक काल में शक्ति या देवी की स्थिति नर देवताओं की तरह श्रेष्ठ थी तथा लगातार उसके कई नामों का उल्लेख हुआ है। ऋग्वेद में देवियों को ऊषा, इला, सरस्वती, आदिती, पृथ्वी, राका आदि नामों से जाना जाता था। यहां ऊषा को प्रत्येक वस्तु की मृत्यु तथा जीवन और दैवी गृहिणी के रूप में विचारा गया है। वह मानवों, पशुओं तथा पक्षियों की जीवनचर्या को व्यवस्थित करती है। कहा जाता है कि वह अराधकों द्वारा जगाई जाती है। वह मानवों तथा विश्व की रक्षक है। यह माना जाता है कि वह मानवों का मार्ग दर्शन तथा जातियों को उत्साहित करने वाली है।[6] ऋग्वेद में ही सरस्वती, होत्र, भारती तथा इला देवी को यज्ञ में भाग लेने का आह्वान तथा उन्हें स्थान आवंटित किये जाने का वर्णन है।[7] उसी में ही आदिती को वरूण तथा मार्तण्ड समेत दूसरे सात बेटों की माता का उल्लेख है।[8] सोम उसका दयापूर्ण प्रकाश के लिए अभिवादन करता है।[9] ऋग्वेद[10] में देवी ऊषा का वर्णन अनेक बार हुआ है। पुरुष देवों–रूद्र, वसु तथा आदित्य के बल का स्रोत वाक्देवी है।[11] देवी वाक् तथा रात्रि, शक्ति के सार्वभौमिक होने की धारणा का सुझाव देती है।[12] ऋग्वेद[13] के देवी सूक्त में ऋषि अम्भरण की ज्ञानवान पुत्री वाक् अपने ज्ञान की पूर्णता तथा उत्साह में बोलती है कि उसने जीवन की आदि शक्ति से सायुज्य स्थापित कर लिया है। उत्तर वैदिक काल[14] में विरण मिलता है कि स्त्री देवताओं ने एक अच्छी स्थिति प्राप्त कर ली, जब परब्रह्म ने अपनी आदिशक्ति से मिलकर इस विश्व की रचना की। सूत्रकाल[16] तक एक नई उन्नति हुई तथा देवी जो कि भवानी, ईशानी, रूद्राणी तथा आर्गेयी के नाम से जानी जाती थी, का वर्णन शिव अर्धांगिनी के रूप में मिलता है। बौधायन[16] गृह्यसूत्र में उल्लेख है कि शिव पत्नी ने व्यवस्थित स्थिति प्राप्त कर ली थी जिसके अनुसार उसकी आराधना देवी के सामन हो गई थी। देवी ने अनेकों विरूद, उसके सभी रूपों में यथा दुर्गा, आर्या, भगवती, महाकाली तथा देवसमकीर्ति, चाहे वे सुखद हो या दुखद हो, प्राप्त कर लिये थे। महाभारत[17] में दुर्गा का अर्जुन द्वारा होने वाले युद्ध में विजय प्राप्ति के लिए श्रृंगारिक किया जाना देवी की शक्ति तथा स्थिति को दर्शाता है। पुराणों[18] में देवी की स्थिति को उठाने के लिए बहुत से आख्यानों को लिखा गया है। विष्णुधर्मोत्तर[19] पुराण में देवताओं के एक सौ से अधिक नामों में से आधे नाम देवियों के हैं। इनमें से अधिक प्रसिद्ध नाम– श्री, पृथ्वी, मा, मेना, भद्रकाली, कात्यायनी, शचि, एकानंशा आदि के हैं। वायु पुराण[20] में देवों की उत्पति के संदर्भ में शंकर का आधे शरी को आकार देने वाली देवियों का उल्लेख है। देवी का जन्म स्वयंभू के मुख से दायां आधा शरीर सफेद तथा आधा बायां काले रंग का होता है। आगे इसका वर्णन है कि देवी ने

अपने आपको दो रूपों – एक सफेद तथा दूसरा काला में परिवर्तित कर लिया। इन दो रूपों को व्यक्तित्व की तुलना में छवि समझना चाहिए। इसी ग्रन्थ में देवियों को तीन चरणों में प्रस्तुत किया गया है। प्रथम चरण में गौरी को स्वाहा, स्वधा, महाविद्या, मेघा, लक्ष्मी, सरस्वती, अपर्णा, एकपर्णा, पाटला, उमा, हेमवती, षष्ठी, कल्याणी, ख्याति, पर्जन्य तथा महाभागा के नामों से जाना जाता है। द्वितीय चरण में देवी आर्या की प्रकृति, नियता, रौद्री, दुर्गा, भद्रा, परमार्थिनी, कालरात्रि, महामाया, रेवती तथा भूतनायिका के रूपों में जाना गया। तृतीय चरण में देवी भद्रकाली को अनेक प्रकारों से यथा गौत्मी, कौशिकी, आर्या, चण्डी, कात्यायनी, सती, कुमारी, यादवी देवी, वरदा, कृष्णापिंगला, बहिर्ध्वजा, सुलधरा, परमब्रह्मचारिणी, माहेन्द्री, इन्द्रभागिनी, वृषकन्या, एकवासिनी, अपराजिता, बहुभुजा, प्रगल्भा, सिंहवाहिनी, एकनंसा, दैत्यहनी, माया, महिषमर्दिनी, आमोधा, विन्ध्यनिलया, विक्रांता तथा गणनायिका से जाना जाता है। इसी पुराण में आगे लिखा है कि महादेवी के दो मुख्य प्रकार–पर्जन्य तथा भी है जो कि अपने हजारों रूपों में पूरे में छाये हुए है।

महाभारत[21] तथा हरिवंश पुराणा[22] में दुर्गा या आर्या की शंकायुक्त स्तुतियां दी गई हैं। देवी महात्म्य[23], चण्डीशतक[24] में देवी की प्रशंसा, विंध्यवासिनी देवी की गौडवहों[25] में स्तुति आदि कई प्रकार की देवियों के अन्य महत्त्वपूर्ण स्त्रोत हैं, जहां महादेवी के नामों तथा रूपों का वर्णन है। भारतीय धर्मों के इतिहासकारों को यह समझ में आ गया हो कि ऐसे नामों तथा विरूदों का एकत्रित होना एक ऐतिहासिक प्रक्रिया है, जिसमें स्वतन्त्र उत्पत्ति की प्रसिद्ध देवियां, महादेवी की धारणा बनाने के लिए एक हो जाती है।[26]

देवियों का विवरण बौद्ध तथा जैन साहित्य में भी प्राप्त होता है। बोद्ध ग्रन्थ सद्धर्म पुण्डरिका[27] सूत्र के अनुसार कई नारियां जैसे लम्बा, विलम्बा, कूटदन्ती, पुष्पदन्ती, मुकुटदन्ती, केशिनी, अचला, मालाधारी, सर्वस्तवोजहारी तथा हारिती, यद्यपि इन्हें राक्षसी कहा जाता है तथापि अपने बच्चों तथा परिवारों के साथ बुद्ध के पास अपने जादुई मंत्र देने के लिए आयी थी। ललित विस्तार[28], बौद्ध संस्कृति साहित्य, में बत्तीस देवियों का उल्लेख मिलता है जो कि चारसमूहों, प्रत्येक में आठ देवियां हैं में चार दिशाओं में देवताओं के रूप में रक्षा करती हैं। ये देवियां[29] स्वास्थ्य तथा खुशियां देने वाली देवकुमारियां कहलाती हैं।

जैन साहित्य अंगविज्ज[30] तीन भिन्न–भिन्न स्थानों पर प्रभावशाली देवताओं, जिनमें बहुत सी देवियां भी सम्मिलित हैं, के नाम देता है। प्रथम स्थान में असुरों, नागों, गंधर्वो, राक्षसों, यक्षों तथा किन्नरों की पत्नियों तथा पुत्रियों के नामों का विवरण देता है। यहां लगभग चालीस देवियों के नाम जिसमें इस प्रकार के नाम सम्मिलित हैं जैसे हरि, श्री कीर्ति, धृति, स्मृति आदि अप्सराओं के नाम जैसे मेनका, रम्भा, तिलोत्तमा, उर्वशी, मिश्रकेशि, अलंबुषा आदि, समान्य नाम जैसी देवी, भगवती आदि कुछ प्रसिद्ध नाम जैसे इला, सीता आदि तथा वर्तमान नाम जैसे देवकन्या, असुरकन्या आदि का उल्लेख मिलता है। कुछ प्रभावशाली स्त्रियों के नाम

जैसे श्री, एकानंशा, पृथ्वी, रात्रि तथा सरस्वती तथा उसी प्रकार दूसरे नाम जैसे आर्या तथा शकुनी, जोकि बच्चों को पीड़ा देने वाली है, सम्मिलित किये गये हैं। अंगविज्ज[31] में देवियों तथा देवताओं के नाम व्यवस्थित ढंग से वर्णित नहीं है। इनमें कुछ देवता आर्य हैं जबकि दूसरे मलेच्छ हैं।

पौराणिक कथाओं में महादेवी के पीठों या पवित्र स्थलों के साथ ही देवियों के नामों की सूचियां भी दी गई हैं। इन उपाख्यानों का संबंध दक्षयज्ञ के विध्वंस की घटना से है। महाभारतानुसार[32] सती ने अपने पति का अपमान सहन न करते हुए अपना भौतिक शरीर भस्म कर दिया। जिससे दुखी शिव ने दक्ष को मारकर तथा उसके यज्ञ का विध्वंस करके अपनी प्रिया का शरीर कंधे पर धारण करके पागल की भांति विचरण किया। शिव का मोह भंग करने के लिए देवताओं ने एक उपाय सुझाया, कि सती के मृत शरीर के टुकड़े करके पृथ्वी पर बिखेरे जावें जिसके परिणामस्वरूप पवित्र पीठिकाओं या शक्ति पीठिकाओं का निर्माण हुआ। मत्स्य पुराण[33] में भी दक्ष यज्ञ विध्वंस का वर्णन मिलता है। देवी के प्रतीक पवित्र स्थल में उनके शरीर के भाग रखे हुए हैं का विचार बाद में, संभवतः उत्तर गुप्त काल में, दक्ष यज्ञ की कहानी के साथ जोड़ा गया।[34] मत्स्यपुराण[35] में देवी के एक सौ आठ पवित्र स्थलों के नाम वर्णित हैं। ये नाम पीठो की बजायः तीर्थों या स्थलों का बोध करवाते हैं।[36]

मातृकाओं तथा बालग्रहों के रूप में शक्ति :

महाकाव्य तथा पौराणिक कथाओं में हमें शक्तियों या देवियों की लम्बी सूची मिलती है, जिन्हें मातृकाओं के नाम से संबोधित किया गया है। ये सूचियां महाभारत[37], विष्णुधर्मोन्तर पुराण[38] तथा मत्स्य पुराण[39] में पायी जाती हैं। महाकाव्य तथा पुराण की कथाओं में मातृकाओं को पिशाचग्रस्त तथा रक्त-पिपासु के रूप में और कभी-कभी इनको मानव के शिशुकाल व बाल्यावस्था में राक्षसी तथा पीड़ा देने वाली वर्णित किया गया है। मार्कण्डेय[40] पुराण के अनुसार बुरे तथा कुरूप दानव को दुःसह कहा गया है। यह दुःसह मृत्यु तथा अलक्ष्मी की सन्तान सदा मानव को पीड़ा देने तथा नष्ट करने के लिए तैयार रहता है। परन्तु इसे बलि देकर तथा इसके नाम का जय करके मनाया जा सकता है। इसी ग्रन्थ में उसके आठ पुत्र तथा आठ पुत्रियां जो कि बहुत ही भयंकर तथा बुरे हैं तथा साथ ही पुत्रियों के नामों यथा नियोजिका, विरोधिनी, स्वयंहारिका, भ्रामणी, ऋतुहारिका, स्मृतिहरा, बीजहरा तथा विद्वेषिणी का भी वर्णन है। मार्कण्डेय[41] पुराण में ही इन प्रेतग्रस्त जीवों की बुरी गतिविधियों का विस्तृत विवरण तथा उनके द्वारा अनेकों मामलों में रोगहर रीति का भी उल्लेख मिलता है। ऋतुहारिणी[42] की पुत्री जातहारिणी को गर्भवती महिलाओं के गर्भ गिराने वाली दिखाया गया है, जिसके कारण जातहारिणी से जच्चा कक्ष की रक्षा की चेतावनी दी जाती है। चिकित्सा[43] ग्रन्थानुसार जातहारिणी केवल दानवी नहीं थी बल्कि जन्म से संबंधित संस्कारों में उसकी प्रसिद्ध देवी के रूप में पूजा होती है। कुबुद्धि प्रकृति[44] की नारियां जैसे शकुनि, रेवती, पूतना, अंधपूतना, शितपूतना तथा

मुखमंडिका जो कि बच्चों को कई तरह की पीड़ा देती है बालग्रहों के रूप में विवरण प्राप्त होता है। उनकी प्रशंसा तथा पूजा देवियों की भांति की जाती है तथा जब उनके बुरे प्रभाव को दूर करना हो तो उनको भेटें देकर प्रसन्न किया जाता था। संबंधित देवी की छोटी प्रार्थनाओं में उनके रूपों तथा कई नामों का उल्लेख हुआ है। इसलिए रेवती की छोटी प्रार्थनाओं में उनके रूपों तथा कई नामों का उल्लेख हुआ है। इसलिए रेवती को कराला, विनता, लम्बा, शुष्कनामा तथा बहुपुत्रिका भी कहा गया है।[45] दूसरा चिकित्सा[46] ग्रन्थ भी रेवती को बालग्रह के रूप में वर्णित करता है। यहां कार्तिकेय के निर्देशानुसार देवी का स्वभाव मनुष्यों को पीड़ा देने वाला न होकर दूसरे बुरे जीवों द्वारा दी गई पीड़ा से बचाव वाला हो जाता है। यद्यपि देवी के कई रूपों का उल्लेख है तथापि उसका मुख्य रूप जातहारिणी है तथा उसके दो नाम रेवती तथा जातहारिणी निरन्तर प्रयुक्त होते रहे हैं।[47] अपने वंश[48] की वृद्धि तथा लम्बी आयु के लिए देवताओं द्वारा उस देवी की अर्चना की जाती है। शक्ति तथा प्रभाव में रेवती दूसरे ग्रहों से बढ़कर है तथा बच्चों की किसी तरह की पीड़ा से मुक्ति के लिए तथा भय से स्वतन्त्रता के लिए उसकी पूजा की जाती है।[49] यहां वह पुनः अनेक नामों तथा रूपों जैसे वारूणी, ब्राह्मी, कुमारी, बहुपुत्रिका, षष्ठी आदि से वर्णित है। इसी में ही वर्णन है कि छह मुख वाली देवी – षट्मुखी–षठी की पूजा बच्चा होने के छठे दिन की जानी चाहिए।

महाभारत[50] में भी स्त्री ग्रहों से पीड़ित शिशु तथा बाल्यावस्था तथा उन ग्रहों के बुरे प्रभाव से रक्षा की आराधना का वर्णन है। महाकाव्य[51] में शकुनिग्रह, पूतना, शितपूतना, रेवती तथा मुखमंडिका की पहचान क्रमशः विनता, राक्षसी, पिशाची, आदिती तथा दिती से की गई है। महाभारत[52] तथा विष्णुपुराण[53] में रेवती को बलराम की पत्नी के रूप में दिखाया गया है। गौडवहो[54] में रेवती का उल्लेख भयंकर देवी विन्धयवासिनी की सहायक के रूप में किया गया है। वैदिक तथा उत्तर वैदिक काल[55] में रेवती को नक्षत्र माना जाता था। यहां से संभवतः उसकी राक्षसी तथा रोग दानवी की धारणा का प्रारम्भ हुआ तथा शनैः–शनैः यह प्रसिद्ध देवी के रूप में परिणित हुई थी। यह कहा जाता है कि जब हर्षवर्धन[56] का जन्म हुआ तो जच्चा घर के द्वार, जहां विलासवती अपने प्रसव काल में भी, की एक ओर षष्ठी और दूसरी ओर कार्तिकेय की चित्रकारी या मूर्ति स्थापित करके सजाया गया है। पारस्कर ग्रहसूत्र[57] में उल्लेख है कि जब तक माता बच्चे की चारपाई न छोड़े तब तक जच्चा कक्ष के समीप अग्नि में सुबह तथा शाम गोधूलि काल में अवश्य ही सरसों के दानों को चावल के छिलकों के साथ मिलाकर डालना चाहिये। उक्त गृहसूत्र में उल्लेखित उपश्रुति कालान्तर में ऐसी देवी बन गई जो कि भविष्यवाणी करती है।

महाभारतानुसार[58] छुपे हुए इन्द्र को ढूंढने में इन्द्राणी की सहायता इस देवी ने की थी। कादम्बरी[59] में वर्णन है कि रानी को पुत्र प्राप्ति के लिए रानी विलावती ने अपने अनुचरों के साथ देवी उपश्रुति की पूजा की थी।

उपर्युक्त विवरणों में हमने देखा कि रेवती, जातहारिणी, षष्ठी, उपश्रुति आदि उस

सारे वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है जो कि मूलतः दानवी प्रकृति की थी तथा जिनका संबंध विशेषकर गर्भावस्था, जन्म, शिशु संबंधी मृत्यु तथा बीमारी से था। परन्तु उन्होंने धीरे-धीरे अपने पूजा नियमों में उन्नति की तथा उनमें से कुछ अधिक प्रभावशाली बन गई।

वृक्षों, पर्वतों, नदियों आदि के रूप में शक्ति :

वृक्षों में निवास करने वाली देवियों की आराधना का विवरण हमें महाभारत[60] में मिलता है। इस महाकाव्य के अनुसार जो भी बच्चों की इच्छा रखता है उसको वृक्षों में जन्मने वाली देवियों की पूजा करनी चाहिए। इन देवियों को वृद्धिका कहा जाता है जो कि मानव के मांस को खाती है। वासुदेव शरण अग्रवाल का विचार है कि यह वृद्धिका उसी प्रकार की देवी है जिसका वर्णन महाकाव्य[61] में बालग्रह के रूप में आर्या तथा आर्यावृद्धा के नाम से किया जाता है। कादम्बरी[62] के अनुसार जिसकी प्रतिमा रानी विलासवती के जच्चा कक्ष में बिखरे चावलों के ऊपर स्थापित की गयी थी। वासुदेव शरण[63] अग्रवाल का यह भी विचार है कि बिहाल तथा बिमाता की आधुनिक मूर्तियां, जिनकी पूजा जन्मोत्सव से संबंधित हैं, प्राचीन देवी वृद्धिका की है जिन्हें विभिन्न नामों जैसे आर्या, आर्यावृद्धा आदि से पुकारते हैं। आनन्द कुमार स्वामी[64] के अनुसार स्त्रियों की मूर्तियां, जिनको आरंभिक भारतीयकला में वृक्षों से जोड़ा गया, यक्षिणियों का प्रतिनिधित्व करती है। इसकी पुष्टि में दशकुमार[65] चरित्र का उदाहरण दिया गया है कि विंध्य में घूमती हुई प्रेमती ने पेड़ के पास उस सांय निवास करने का निर्णय लिया तथा पेड़ में निवास करने वाली देवी से रक्षा की प्रार्थना की जिसके बाद में ज्ञात हुआ कि संबंधित देवी यक्षिणी तारावली थी। लेकिन कुमार स्वामी[66] स्वयं सचेत था कि वृक्ष देवी निश्चित रूप से यक्षिणी ही थी। उसने महाभारत[67] के कुछ दृष्टान्त दिये हैं कि द्रोपदी के कदम्ब वृक्ष के पास झुकने पर कोटिक ने उससे पूछा कि वह कौन थी, देवी या यक्षी या दानवी या अप्सरा या दैत्य की पत्नी या नागराजा की पुत्री या एक राक्षसी या वरूण, यम, सोम तथा कुबरे की पत्नी।[68] उसके अनुसार पेड़ के पीचे स्त्री का विचार कई तरह से पहचाना जा सकता है। अथर्ववेद[69] का प्रमाण है कि वृक्षों में निवास करने वाली अप्सराओं तथा गन्धर्वों को वहां से गुजरती हुई बारात के लिए कल्याणकर माना जाता है।

उद्धरणों से ज्ञात होता है कि देवियों का संबंध पहाड़ियों तथा पर्वतों से था। सबसे प्रभावशाली उदाहरण देवी विंध्यवासिनी, विंध्य पर्वत पर निवास करने वाली का है। उसी प्रकार हेमवती, हिमवान पर्वत की बेटी, पार्वती आदि नामों से स्पष्ट होता है कि बहुत सी देवियों की अवधारणा पहाड़ियों तथा पर्वतों की नारी आत्माओं से ली गई होगी।[70]

कुछ ग्रन्थों में प्रभवशाली देवियों तथा नदी देवताओं का विवरण मिलता है। महाभारत[71] और पुराणों[72] में पवित्र नदियों की लम्बी सूची मिलती है। रामायण[73] में नदी देवियों का उल्लेख मिलता है जहां सीता द्वारा गंगा की स्तुति की जाती है। वनवास के प्रारम्भ में जब पवित्र नदी गंगा को पार करते हैं तो राम की रक्षा के लिए तथा तीनों पति, देवर तथा स्वयं की सुरक्षित

वापसी के लिए सीता हाथ जोड़कर देवी की अर्चना करती है। सीता, नदी देवी को प्रसन्न करने के लिए विनम्र संकल्प लेती है कि उनकी सुरक्षित वापसी पर एक लाख गायों, बहुत सा अन्न तथा सुन्दर वस्त्र ब्राह्मणों को दान देगी। कौटिल्य के अर्थशास्त्र[74] के अनुसार पर्व के दिनों में नदियों की पूजा का विधान है। अकाल[75] पड़ने पर यहां इन्द्र, गंगा आदि की आराधना का सुझाव भी दिया गया है। महाभारत[76] में सभी नदियों को विश्व की माताओं के रूप में माना गया है। नदियों को देवता मानना, जो कि लगभग निश्चित रूप से स्त्रीलिंग नामों को धारण करती है, प्राचीन भारत में देवियों का अन्य विचारणीय स्त्रोत है।

तीर्थों के रूप में शक्ति :-

प्रायः तीर्थ पवित्र नदियों के किनारों पर पवित्र स्थलों को कहते हैं। सामान्यतया इन तीर्थों की पवित्रता उन नदियों, नालों आदि से है जिनके किनारों पर स्थित हैं परन्तु विशेषतः वे स्थल देवताओं, सन्तों आदि के जुड़ाव के कारण पवित्र हैं। महाकाव्य में तीर्थों की एक बहुत बड़ी सूची दी है जो कि कुछ देवियों के कारण पवित्र हैं। देश की उत्तर-पश्चिमी दिशा में भीमा देवी[77] का योनि नामक पवित्र स्थल है। मान्यता है कि इसमें स्नान करने पर मानव देवी पुत्र के समान हो जाता है। उसी दिशा में कुरूक्षेत्र[78] में महादेव के पवित्र स्थल के समीप विश्व प्रसिद्ध यक्षी स्थल विद्यमान है। राजगृह[79] के समीप एक अन्य यक्षी मन्दिर है जहां निरन्तर पूजा होती थी। ब्रह्म ऋषि गौतम[80] के जंगलों में एक अहल्याह्रद तीर्थ है जिसमें श्री लक्ष्मी की पूजा से पूर्व स्नान करना प्रसिद्ध है यहां श्री लक्ष्मी[81] का पवित्र तथा सम्पन्नता देने वाला श्री तीर्थ विद्यमान है। शंखिणी तीर्थ[82] जिसका वर्णन विशेषकर देवी का तीर्थ करके है। मातृदेवी[83] का तीर्थ मातृ-तीर्थ कहलाता है, जिसमें स्नान करने से बहुत से वंशज तथा सम्पति मिलती है। सरस्वती तथा अरूणा[84] का संगम देवी तीर्थ कहलाता है। मधुवती[85] भी देवी का तीर्थ है। अनरक तीर्थ[86] में देवी रूद्रपत्नी को देखा गया है। महापुन्या सरस्वती[87] का विशेष तीर्थ प्लक्षादेवी के नाम से जाना जाता है। एक स्थान के दर्शन पाण्डवों द्वारा किये गये जहां पर देवी सरस्वमती[88] को मानव रूप में देखा गया था। ब्रह्माणी तीर्थ[89] एक ऐसा स्थल है जो कि ब्रह्मा की पत्नी के नाम से पवित्र है तथा जिसके दर्शन ब्रह्मणी तीर्थ[89] एक ऐसा स्थल है जो कि ब्रह्म की पत्नी के नाम से पवित्र है तथा जिसके दर्शन ब्रह्मलोक में निवास दिलवाने वाले हैं। योनिद्वार[90] तीर्थ के दर्शन मात्र से पुनर्जन्म से मुक्ति मिलती है, जिसका संबंध किसी पवित्र देवी से रहा होगा। यहां पर महादेवी गौरी का विश्व प्रसद्धि पर्वत-शिखा तथा उसके समीप ही स्तनकुण्ड[91] का महत्वपूर्ण विवरण है। कन्यातीर्थ, कन्याश्रम[92], शक्र[93] की कुमारिकाओं आदि नामों से निसन्देह इनके देवियों के तीर्थ होने का संकेत मिलता है। कावेरी नदी[94] के दक्षिण में तथा समुद्र के किनारे स्थित होने के कारण ऐसे एक तीर्थ का उल्लेख करना समीचीन होगा। क्योंकि संभवतः इसी का पेरीप्लस[95] ने कुमारी नाम से वर्णन किया है, जहां पर पुरुष तथा महिला जीवन के पवित्र बन्धन में बंधने के लिए यहां स्थान करके ब्रह्मचर्य से रहते हैं, चूंकि यहां पर एक देवी ने स्नान तथा निवास किया था। पृथ्वी

तीर्थ[96] भी संभवतः पृथ्वी देवी के कारण पवित्र है।

महाभारत के अरण्यक पर्व में दी तीर्थों की सूची के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि पानी वाले पवित्र स्थलों का संबंध कई प्रकार की देवियों से रहा था।[97] महाभारत में दी गई सूची साधारणतया पूरे भारतवर्ष की है तथा ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में देवियों के मतों का प्रभाव भारत में बहुत विशाल क्षेत्र में होने का संकेत देती है।

ग्रामों तथा शहरों की संरक्षक रूप में शक्ति :

सामान्यतः देवियां गांवों तथा शहरों की संरक्षक देवताओं के रूप में थीं। भविष्य पुराण के सन्दर्भों से ज्ञात होता है कि देवी प्रत्येक स्थान, पुर तथा ग्राम में पाई जाती है।[98] बाद में देवी भागवत[99] पुराणा में ग्राम देवी के बहुत से प्रकारों के बारे में ज्ञान होता है जिनकी पूजा ग्रामों तथा शहरों में की जाती थी। मथुरा से प्रारम्भिक कुषाण[100] काल के अभिलेख से ज्ञात होता है कि कनिष्क राज्य के 10वें वर्ष में एक मन्दिर समर्पित किया गया था। लुडर[101] ने इस अभिलेख का निष्कर्ष भाग पढ़ा है यथा ''ग्राम की देवी प्रसन्न हो'' यह अध्ययन ग्राम की संरक्षक देवी के मत का स्पष्ट संकेत देता है। साहित्यिक साक्ष्य भी नगर देवता तथा शहरों के संरक्षक देवता का सामान्यतः महिला देवताओं के होने के संकेत देते हैं। मृच्छकटिका[102] में नायिका वसंत सेना की तुलना एक नगर देवता से की गई है। कौटिल्य[103] के अर्थशास्त्र में लिखा है कि नगरदेवता को उत्तरदिशा में स्थापित करना चाहिए। कालिदास के रघुवंश[104] के अनुसार अयोध्या की संरक्षक देवी कुश के सामने एक सुन्दर युवती के रूप में प्रकट हुई तथा लंबा संवाद किया। उस देवी ने राम की अनुपस्थिति पर पश्चाताप किया तथा युवा राजकुमार कुश को पैतृक राजगद्दी पर आरूढ़ होने की प्रार्थना की। राजकुमार ने प्रसन्नता के साथ उसको अनुग्रहित किया तथा उसके पश्चात् देवी खुश होकर वहां से विलीन हो गई। कादम्बरी[105] के उल्लेखनुसार रानी विलासवती ने अवन्ति मातृकाओं, अवन्ति शहर की संरक्षक देवियां, के मंदिर में अपने पुत्र चन्द्रपीड़ की सुरक्षित वापसी के लिए पूजा की थी। पुष्कलावती शहर[106] की संरक्षक देवी के मत की पुष्टि स्वर्ण मुद्रा पर मुकुट धारण किये खड़ी देवी से होती है, जहां पर खरोष्टी लिपि में, पुखलवदि देवद, लिखा है। राजस्थान से प्राप्त 7वीं शताब्दी के दो अभिलेखों में देवी अरण्यवासिनी तथा देवी वसुंधरा के मंदिरों का उल्लेख है। पूर्वकालीन जोधपुर राज्य से 7 वीं शताब्दी का ही एक अन्य अभिलेख देवी दधिमती के मन्दिर तथा कुछ दधय ब्राह्मणों द्वारा अंशदान दिये जाने का वर्णन करता है, संभवतः मन्दिर या देवी मत के संबंध में यह अंशदान दिया गया होगा।[108] चूंकि यह अभिलेख देवी के मंदिर में पाया गया है जिसे स्थानीय जन दधमाताजी कहते हैं तथा दाहिमा ब्राह्मण मंदिर के पास वाले गांव में ही रहते हैं तथा इस देवी को अपनी कुलदेवी मानते हैं। यह सुझाव तर्काधारित है कि आधुनिक देवी वही है जिसका अभिलेख में उल्लेख है तथा आज के दाहिमा ब्राह्मणों के पूर्वज दधय ब्राह्मण ही है। इस प्रकार अभिलेख स्थानीय या पारिवारिक देवी मत की निरन्तरता का साक्षी है।[109]

कालान्तर में देवी को उसके उद्गम के तीनों रूपों में यथा शुभ, भयंकर तथा विलासी और कापालिकाओं, कालामुखाओं तथा शाक्ताओं के साथ पूजा जाने लगा।[110] शक्ति के इन रूपों के चारों ओर तन्त्र की जो उन्नति हुई उसे आनन्द भैरवी, त्रिपुरासुन्दरी, ललिता आदि कहा जाता है तथा आध्यात्मिक सिद्धान्त संभवदर्शन की उत्पति हुई।[111] पुराणों के काल तक देवी उच्च अवस्था को प्राप्त कर चुकी थी तथा श्रेष्ठ देवता समझी जाने लगी जिसे शाक्तों में शक्ति कहा जाने लगा। उसके व्यक्तित्व में एक रूप और जोड़ा गया तथा वह दानवों को चीरने वाली तथ दूसरे देवताओं की भांति पवित्रजनों की हितकारी हो गई। मार्कण्डेय पुराण के देवी महात्म्य में शक्ति की धारणा अपने चर्मोत्कर्ष पर पहुंची। जहां श्री, दुर्गा, चण्डी, अन्नपूर्णा, जगधात्री आदि उसके बहुत से नामों में से कुछ हैं। ये नाम स्थानीय देवियों के विभिन्न नामों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो मिलकर एक श्रेष्ठ मातृदेवी बन गये थे।

प्रारम्भिक तथा उत्तर वैदिक काल में किसी भी मत की मूर्ति का कोई सकारात्मक प्रमाण नहीं मिलता। मौर्यकाल में बनी यक्षियों की पकी मिट्टी की लघु मूर्तियां तथा स्वर्ण पत्र पर पृथ्वी देवी को दिखाना निश्चित रूप से सामान्य लोगों में मातृदेवी की पूजा की ओर संकेत करते हैं।

आरम्भिक गज लक्ष्मी के प्रतिनिधित्व के प्रमाण ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी के उज्जैन तथा कौसाम्बी से प्राप्त मुद्राओं तथा ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी के अयोध्या से विशाखदेव, शिवदत तथा वासुदेव की मुद्राओं से मिलती है।[112] अजेस[113] की मुद्राओं पर लक्ष्मी को उसके दांये हाथ में एक पुष्प के साथ दिखाया गया है। कुषाण[114] राजाओं की मुद्राओं पर भी देवी की मूर्ति को स्थान मिला है। वासुदेव के सिक्कों पर देवी को एक गद्दी पर बैठे, केशबन्ध तथा एक फल पकड़े दिखाया गया है। गुप्तों की मुद्राओं पर देवी को बैठे, बांये हाथ में एक कमल का पुष्प-फल के ऊपर पकड़ें, दायें हाथ में एक केशबन्ध पकड़े तथा उसका पैर कमल के ऊपर रखा दिखाया गया है।[116]

शिलालेखों में भी कई देवियों के संदर्भ मिलते हैं। स्कन्द गुप्त[117] के बिहार अभिलेख पर स्कन्द के साथ मातृकाओं का सन्दर्भ प्राप्त होता है। राजा अनन्तवर्मन[118] के नागाअर्जुन गुफा के अभिलेख में देवी द्वारा महिष दानव को मारने की कहानी उत्कीर्ण है। बैजनाथ[119] अभिलेख मे दुर्गा देवी के दोनों रूपों भंयकर तथा सौम्य का वर्णन है। इस प्रकार देवी के साहित्यिक सन्दर्भों की पुष्टि मुद्रा लेखों तथा शिलालेखों से होती है।

सामान्यत लोगों का एक बहुत बड़ी संख्या में देवी मत में विश्वास को प्रमाणित करने के लिए उपर्युक्त साहित्यिक तथा पुरातात्विक सन्दर्भ दिये गये हैं। इन देवियों के बहुत से प्रकार तथा कार्य थे तथा इनमें से अनेक स्वतन्त्र उत्पतियों की रही होंगी, अतः उनकी प्रसिद्धि की एक ऐतिहासिक व्याख्या नहीं की जा सकती। चाल तथा सम्पर्क की ऐतिहासिक प्रक्रिया के परिणाम स्परूप ही व्यक्तिगत देवियों या प्रकारों के व्यापक मतों की व्याख्या की जा सकती है तथा बहुत

सी देवियों की विशेष प्रकृति तथा गतिविधि ने उन्हें अधिक चिरस्थाई बनाया होगा। यह विशेषकर देवियों के दानवी, भयानक तथा लड़ाकू प्रकृति के विषय में कहा जा सकता है।[120]

कालान्तर में हिन्दू सिद्धान्त की दुर्गा-पार्वती, लक्ष्मी तथा सरस्वती देवियों में अधिक प्रभावशाली बन गई। उन्होंने देवताओं में महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त की तथा मुख्य देवताओं-शिव, विष्णु तथा ब्रह्मा की अर्धांगिनियां बन गयी थी। शुंग-सातवाहन काल से उनके विभिन्न रूपों का प्रतिनिधित्व करते हुए बहुत सी मूर्तियां बनाई गई थीं।

संदर्भ ग्रंथ -

1. अर्नेस्ट मैके, **अर्ली इण्डस सिविलाइजेशन**, पृ. 53-54.
2. वही, पृ. 58 प्लेट, XVII, 8.
3. जोहन मार्शल, **मोहेनजोदड़ो एण्ड इन्डस सिविलाइजेशन**, भाग।, पृ. 62, 68.
4. अर्नेस्ट मैके, ऊपर लिखित, पृ. 53, प्लेट XVI&2-
5. जे.एन. बनर्जीया, **डैवलपमैन्ट ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी**, पृ. 167-68. जोहनमार्शन, उपर्युक्त , । पृ. 52, प्लेट XII -12.
6. ऋग्वेद, I, 48, 5-19.
7. वही, I, 142, 9.
8. वही, II, 28, 3, 10, 72, 4-9 **अथर्ववेद**, V,1,9.
9. वही, VII, 83,10
10. वही, X, 35, 3.
11. वही, X,125, 1.
12. वही, X, 125, .
13. वही, X, 125, 127.
14. **श्वेताश्वतरोषनिषद्**, IV, 1.
15. यदुवंशी, शैवमाता, पृ. 49.
16. **बौधायनगृह्य सूत्र**, II, 5-6; III, 3, 3.
17. **भीष्म पर्व**, 23 एवं आगे.
18. **हरिवंश पुराणा**, VV, 23, 36 एवं अन्य **मार्कण्डेय पुराणा**, अध्याय 82,
19. III, 221
20. 9, 82-98
21. क्रिटिकल एडिसन वाल्यूम 5, एप्प I, नं. 4 पृ. 300, वाल्यूम 7, एप्प I, नं. I, पृ. 710-11
22. हरिवंश, किंजावाडेकर एडिसन, II, 3.

23. **मार्कण्डेय पुराण**, अध्याय 78-90, 54-67; 81, 3-27; 82, 7-39; एवं 88, 2-35.
24. जोर्ज पेयन क्यूकबॉस, **दि संस्कृत पोइमज ऑफ मयूर**, पृ. 467 एवं अन्य (टार, ऑफ बाण 'ज चण्डीशतक)
25. गौडवहो, VV, 285-338.
26. आर.जी. भण्डारकर - वैष्णवीजम, **शैवीजम एण्ड माइनर रिलीजीयस सिस्टमज**, पृ. 143-44.
27. (स.) पी. एल, वैद्य, **सद्धर्मपुण्डरिका सूत्र**, अध्याय XXI, पृ. 235 अनुवाद एच. कर्न **सैक्रेड बुक ऑफ दि ईस्ट**, XXI, पृ. 373,
28. अध्याय XXIV, पृ. 282. सम्पादित बाई पी. अल. वैद्य
29. वही, VV, 117-8, 117-8, 126-7, 135-6 एवं 144-5
30. पृ. 69; इन्ट्रोडक्शन, मोतीचन्द्र, पृ. 36,42,55
31. पृ. 206
32. XII, 274
33. 13, 10
34. डी.सी. सरकार, **दि शाक्त पीठाज**, जर्नल ऑफ द रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, लेटर्ज, XIV, नं. I , पृ. 5, 1948.
35. अध्याय 13, 26-53.
36. अध्याय 13, 54.
37. IX, 45, 1-28.
38. 1, 226, 7.
39. अध्याय 179, 9-32.
40. 47, 33 आगे V, 62. (ट्रान्शेटर पार्जिटर, पृ. 250)
41. अध्याय 48 (ट्रान्शलेटर पार्जिटर, पृ. 257.)
42. अध्याय 48, 103-9. (ट्रान्शलेटर पार्जिटर, पृ. 257)
43. **सुश्रुत संहिता, उतर तन्त्र**, अध्याय 27-35
44. वही, अध्याय 31.
45. वही, अध्याय 31.10.
46. **कश्यप संहिता**, पृ. 90-98.
47. वही, पृ. 187.
48. वही, पृ. 194.
49. वही, पृ. 98 आगे.

50. III, 219, 26 आगे.
51. **महाभारत**, III, 219, 26; V, 27-29
52. वही 211, 7
53. **विष्णु पुराण**, IV, 1, 65; V, 25, 19
54. V 329.
55. पाण्डुरंग वामन काणे, **हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र**, V, भाग I, पृ. 499
56. **कादम्बरी ऑफ बाण भट्ट**, सम्पादक काशीनाथ पाण्डुरंग परब, पृ. 16.
57. **पारस्कर गृह्सूत्र**, , 16, 23. (**सैक्रेड बुक्स ऑफ द ईस्ट**, XXIV, पृ. 296)
58. V, 13, 24-25; 1, 4.
59. पृ. 146.
60. III, 220, 16.
61. **महाभारत**, III, 219, 40.
62. **कादम्बरी**, संपादक काशीनाथ पांडुरंग परब, पृ. 161.
63. वासुदेवशरण अग्रवाल, **कादम्बरी एक सांस्कृतिक अध्ययन**, पृष्ठ 80.
64. ए. के. कुमार स्वामी, **यक्षाज**, भाग I, पृ. 32.
65. **दक्षकुमार चरित ऑफ दण्डी**, 5वां उच्छवास, पृ. 190 आगे
(एडीटिड बाई नारायण बालकृष्ण गोडबोले)
66. ए. के. कुमार स्वामी, ऊपरलिखित, भाग I, पेज 33.
67. III, 265, 1-3
68. ए. के. कुमार स्वामी, ऊपरलिखित, भाग II, पेज 12.
69. XIV, 2, 9
70. एच. जैकोबी, **ब्राह्मणइजम**, एन्साइक्लोपीडिया ऑफ रिलिजन् एण्ड ऐथीक्स, 2, पृ. 813; होपकिन्स, **ऐपिक माइथोलॉजी**, पृ. 224.
VI, 10, 13
72. **विष्णु पुराण**, II, 3.
73. II, 46, 67-73.
74. 4, 3, 10 (संपादक आर.पी. कन्गले)
75. वही, 4,3,12.
76. VI, 10, 35.
77. **महाभारत**, 80, 190.
78. वही, III, 81, 19.
79. वही, III, 82, 90.

80. वही, III, 82, 93.
81. वही, III, 81, 37.
82. वही, III, 81,41.
83. वही, V, 47.
84. वही, VV, 131
85. वही, V, 79
86. वही, VV, 146
87. वही, III, 82, 5.
88. वही, III, 132,2.
89. वही, V, 52.
90. वही, V, 83.
91. वही, VV, 131, 2.
92. वही, III, 81, 94; 82, 117, 83, 34.
93. वही, III, 80, 97.
94. वही, III, 83, 21.
95. **दि पेरीपल्स ऑफ दि एनीदरियन सी**, (ट्रा. बाई विल्फ्रेड एच.एस. चोफ) पृ. 46.
96. महाभारत, III, 81, 11.
97. होपकिन्स, **ऐपिक माइथोलॉजी**, पृ. 11.
98. आर.सी. हजर, **स्टडीज इन द उपपुराणज**, वाल्यूम II, पेज 17, फुट नोट 62
99. IX, स्कन्धः, I, अध्याय, 158.
100. एच. लूडरज, **श्री ब्रम्ही इन्स्क्रिपसन्सः** 1, ब्रिटिस म्यूजियम स्टोन इन्स्क्रिपसन ऑफ दी टाइम ऑफ कनिष्का, **एपिग्रैफिया इण्डिका** IX, 1907-08.
101. वही, पृ. 289-91.
102. ऐक्ट I, V 27, पृ. 22.
103. 2, 4, 15, सं. बाई आर.पी. कंगले
104. XVI, 4-23.
105. ऊपर लिखित, सं., काशीनाथ पाण्डुरंग परब, पेज 649
106. पी. गार्डनर, **कैटालॉग ऑफ इण्डियन कॉइन्स इन द ब्रिटिस म्यूजियमः ग्रीक एण्ड सिथियन किंगज ऑफ बैक्ट्रीया एण्ड इण्डिया**, पृ. 162, प्लेट XXIX.
107. आर. सी. अग्रवाल, **गोडस वर्शिप इन एन्शियन्ट राजस्थान**, आदि जर्नल ऑफ द बिहार रिसर्च सोसाइटी, XLI, भाग I, पृ. 7-8, मार्च 1955.
108. रामकरण, दधिमती माता इंस्क्रिपसन ऑफ द टाईम ऑफ धरूहलाण, ईटिसी.

एपिग्राफिया इण्डिका, XI, पृ. 299, आगे.
109. आर.सी. अग्रवाल ऊपरलिखित, (फुट नोटस 351) जर्नल ऑफ द बिहार रिसर्च सोसायटी, XLI, पृ. 6 एण्ड फुट नोट 1, 1955.
110. आर. जी. भण्डारकार, **वैष्णवीजम, शैवीजम एण्ड माइनर रिलिजीयस सिस्टम**, पृ. 144.
111. वही, पृ. 146-77.
112. जे. ऐल्लन, **कैटालॉग ऑफ द कॉइन्स ऑफ एन्शियन्ट इण्डिया**, पृ. 131, 149, 187, 190.
113. आर. बी. व्हाइटहैड, पंजाब म्यूजियम कैटलॉग, पृ. 129, नं. 30.
114. वही, I, पृ. 197, प्लेट XVIII, 135-36.
115. वही, I, पृ. 197, प्लेट XIX 227-30.
116. जे. ऐल्लन, **कैटालॉग ऑफ कॉइन्स ऑफ द गुप्ता डाइनेस्टी इन द ब्रिटिश म्यूजियम**, LXXII, LXXXIII.
117. जे. एफ. फ्लीट, **कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम्** III, प्लेट VI, पृ. 47.
118. वही, III, प्लेट 31, पृ. 223-26.
119. **एपिग्राफिया इण्डिका**, I, पृ. 104.
120. आर. जी. भण्डारकर, ऊपरलिखित, पृ. 106

❑❑❑

समकालीन काव्य-सर्जक एवं सिसोदिया नायक महाराणा प्रताप

● बी.एल. भादानी

राजस्थान में ऐतिहासिक गद्य एवं पद्य लिखने की समृद्ध परम्परा रही है। पन्द्रहवीं-सोलहवीं सदी में प्रचुर मात्रा में डिंगल-काव्य की रचना के प्रमाण उपलब्ध होते हैं। काव्य लेखन का यह सिलसिला स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भी जारी रहा। काव्य-सर्जकों की रचनाएं सामान्यतः अपने संरक्षकों की प्रशंसा एवं उनके कार्यकलापों पर केन्द्रित होती थीं। इसके अतिरिक्त उनकी रचनाओं के केन्द्र में वे ऐतिहासिक पुरुष भी होते थे जिनके कार्यों से तत्कालीन समाज एवं राजनीति प्रभावित होती थी। ऐसे ऐतिहासिक चरित्र सामान्यतः या तो कवि के समकालीन होते थे या उनके निकटवर्ती काल के होते थे इसलिए उनके वर्णन में ऐतिहासिक तथ्यों का समाहित होना लाजिमी था। लेकिन अपने संरक्षकों के बारे में उनकी काव्य-कृतियों में अतिश्योक्ति का होना भी एक स्वाभाविक लक्षण होता था जिसको इतिहास दृष्टि सम्पन्न शोधार्थी एवं इतिहासकार तिरस्कृत कर सकते हैं। यह किसी भी कवि के रोजगार से जुड़ा प्रश्न होता था इसलिए इसे काव्यात्मक प्रशंसा समझकर छोड़ा जा सकता है लेकिन कोई भी काव्य सर्जक अपने से असंपृक्त किसी समकालीन ऐतिहासिक चरित्र के बारे में रचना करता है तो उसको मात्र 'काव्य-जुगाली'; या 'काव्यात्मक मनोरंजन' कहकर सिरे से खारिज नहीं किया जा सकता। ऐसा करना नितान्त अनैतिहासिक एवं संकीर्ण दृष्टि का परिचायक है। इस प्रकार की रचना करते समय कवि अतिरिक्त सावधानी बरतते हुवे तथ्यों की जांच पड़ताल करने के पश्चात ही उस कृति को स्वरूप प्रदान करता है। इसलिए ऐसी रचनाएं तथ्यपरक काव्यात्मक वर्णन होते हैं। इन रचनाओं को ऐतिहासिक स्रोतों के रूप में उपयोग में लेने से पूर्व हमको अन्यान्य समकालीन स्रोतों एवं तथ्यों से जांच-पड़ताल करके उसकी विश्वसनीयता स्थापित कर लेना चाहिए।

सोलहवीं-सतरहवीं सदी के कवियों ने ऐतिहासिक चरित्रों एवं अपने संरक्षकों पर महाकाव्यों एवं प्रबंधकाव्यों की रचनाएं की हैं जिनको सामान्यतः 'रासो', 'विलास' एवं 'चरित' आदि नामों से अभिहित किया जाता रहा है लेकिन कुछ रचनाकारों ने स्फुट रचनाएं भी की हैं जो इतिहास लेखन की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। ऐसे रचनाकारों में दुरसा आढ़ा, लखा बारहठ, जाडा मेहडू, दला आशिया, शंकर बारहठ एवं किसना भादा आदि मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त भी असंख्य कवि हुवे हैं जिन्होंने इतिहास की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्फुट रचनाएं की हैं। इन काव्य कृतियों में आए ऐतिहासिक चरित्रों की पहिचान अन्य साक्ष्यों के साथ तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा करके कुछ अनछुए एवं उलझे

पक्षों को उजागर किया जा सकता है।

इस आलेख में मैंने मेवाड़ के शासक महाराणा प्रताप (1572-97 ई.) पर उनके एक समकालीन कवि द्वारा रचित कविताओं के आलोक में उनकी चारित्रिक विशिष्टताओं को उजागर करने का प्रयास किया है। इसके साथ-साथ उन रचनाओं में वर्णित विषय-वस्तु की अन्य समकालीन एवं परवर्ती स्रोतों से तुलना करके उसकी ऐतिहासिकता की भी जांचने का प्रयास किया गया है ताकि उसकी ऐतिहासिक प्रामाणिकता स्थापित की जा सके।

जाडा मेहडू नामक कवि महाराणा प्रताप का समकालीन था लेकिन उनसे असंपृक्त था। वह महाराणा उदयसिंह के छोटे पुत्र जगमाल का दरबारी आश्रित कवि था। महाराणा उदयसिंह ने जगमाल को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया जो सिसोदिया वंश परम्परा के प्रतिकूल था इसलिए सिसोदिया शासक के स्वर्गवास के पश्चात मेवाड़ के सरदारों ने उसे राजगद्दी से उतार कर प्रताप को मेवाड़ का शासक घोषित कर दिया। परिणामस्वरूप जगमाल रूठ कर मुगल दरबार में अकबर के पास चला गया। मुगल बादशाह ने उसे जहाजपुर का परगना वतन (पैतृक सम्पत्ति) के रूप में प्रदान कर दिया। जाडा मेहडू उसी जहाजपुर के शासक का दरबारी कवि था जिसका प्रताप से वैमनस्य था। जाडा जगमाल की सेवा में था इसकी पुष्टि पूर्ववर्ती को परवर्ती द्वारा सांसण में प्रदत्त गांव से होती है। जगमाल की सेवा में रहकर उसके राजनीतिक प्रतिद्वन्द्वी महाराणा प्रताप पर कविता लिखना इतिहास एवं ऐतिहासिक तथ्यों के प्रति उसकी इमानदारी को दर्शाता है। उसने ऐसे व्यक्ति पर रचना की जिसके कारण से उसके स्वामी को न केवल अपमानित होना पड़ा बल्कि उसे अपना पैतृक राज्य त्यागना पड़ा। इन परिस्थितियों में जाडा मेहडू की रचनाओं का महत्त्व बढ़ जाता है एवं उसके द्वारा लिखित कविताएं वास्तव में इतिहास के महत्त्वपूर्ण स्रोत का स्वरूप ग्रहण कर लेती हैं जिसके कारण से ये तथ्यात्मक विवरण बन जाते हैं। महाराणा प्रताप पर कवि द्वारा रचित कविताओं की समकालीन स्रोतों से तुलना के द्वारा उनकी सत्यता परखने का प्रयास किया गया है। उसका एक गीत निम्न हैं :-

लख जुटै मीर स खूटै लोहे,
लख द्रब कोड़ि भंडारां लाई।
अकबर वरतण दियौ ऊंबरां,
पातल रांणा तणै पसाइ।।
मेल्है फौज स फौज मारिजै
मेलि बिया भड़ करै मंडांण
खौद तणा लसकर द्रब खाएं,
खड़ग पसाइ तूझ खूमांण
आवैं थाट स थाट आवटै,

अनि अनि मेलै खपे अयार।
असपति गरथ दियै उळगाणां
असिमर रांणा तणा उपगार।।
भुज भांजीयै जम करि भारथ,
भुज पूजीयै तेम भाराथि।
हैवै मुगति भुगति फळ होवै,
हींदूवां रांण तुहारैं हाथि।।

उपर्युक्त गीत में मुगल बादशाह अकबर द्वारा भेजे गए सैनिक अभियान का वर्णन है जिसमें प्रताप द्वारा किए गए प्रतिरोध का जिक्र है। उपर्युक्त कविता का सारांश यह है कि बड़ी संख्या में मुगल अमीर (सैनिक या सेनानायक) युद्ध में मारे गए। बड़ी मात्रा में द्रव्य अर्थात धन खर्च हुवा जिसे अकबर ने युद्ध में उपयोग हेतु उमरावों को प्रदान किया था। महाराणा प्रताप के विरुद्ध जो सेना भेजते हैं जिसमें से अनेक सैनिक मारे जाते हैं। पुनः सुभट अथवा यौद्धा भेजकर तैयारी करते हैं। जो सैनिक छावनी बनाकर रहते हैं उन पर काफी धन व्यय होता है। महाराणा प्रताप की तलवार की मार से सब भयभीत रहते हैं। सिसोदिया सैनिकों द्वारा समूह में आक्रमण किया जाता है एवं शत्रु पक्ष के अनेक यौद्धा मारे जाते हैं। मुगल बादशाह अकबर अपने सेनानायकों अर्थात सेवकों को धन प्रदान करता है। इस गीत में कवि महाराणा प्रताप से अपील करता है कि शत्रु सेना का विनाश कीजिए। हिन्दुओं की प्रतिष्ठा की रक्षा करना आपके हाथ में ही है।

उपर्युक्त गीत में आए सन्दर्भ की पुष्टि अबुल फज़ल द्वारा संकलित साक्ष्य से होती है। हल्दीघाटी युद्ध के पश्चात अक्टूबर 1576 में न केवल अकबर स्वयं मेवाड़ की ओर आया बल्कि कई सेनानायकों को अलग-अलग क्षेत्रों में नियुक्त कियां ताकि राणा को घेर कर बंदी बनाया जा सके। भगवन्तदास एवं मानसिंह को गोगुन्दा भेजा। इसी प्रकार गाजी खाँ बदख्शी, शरीफ मुहम्मद खाँ अलगा, मुजाहिद खाँ एवं सुभान अली खाँ को 3000 घुड़सवारों के साथ मोही थाने पर नियुक्त किया। इसके अतिरिक्त जलालुद्दीन के पुत्र अब्दुर्रहमान एवं मुयाद बेग के बेटे अब्दुर्रहमान को 500 सैनिकों के साथ मदारिया क्षेत्र की रक्षा के लिए नियुक्त किया।

मेहड़ू एक गीत में मेवाड़ के यौद्धाओं की प्रशंसा में लिखता है कि मेवाड़ के यौद्धा शत्रु सेनाओं को नष्ट करने वाले एवं उनके हाथियों को बलपूर्वक पीछे धकलने वाले वीर हैं। इस वीर वसुन्धरा का स्वामी महाराणा प्रताप जैसा है। अपने सैन्य एवं शस्त्र बल से शत्रुओं के हाथियों की सेना को रोकता है। उनके अधीन क्षेत्रों (अर्थात मुगलों के अधीन क्षेत्रों) पर राणा अपना आधिपत्य स्थापित कर लेता है। शत्रु सेना को अलग-अलग स्थानों गुरिल्ला पद्धति से हमला करके नष्ट करता है। इसी प्रकार के आक्रमणों से शत्रु सेना को महाराणा प्रताप विचलित करता रहता है। कवि द्वारा रचित गीत का मूल पाठ निम्न है -

मुंहिं मुंहि मारकां भाड़ां मेवाड़
गजदळ हेड़वता सगह।
धणीस न्याइ कहावै धरती,
पताज तो जिम जड़ै पह
अणी अणी अरि सौं आफळता
पालै हसति भुजे करि प्रांणा।
रूके भिळै तूझ जिम रांणा,
रेणा तियां वसि आवं रांणा।।
फरि फरि फौज फौज फुरळंता
वयंड हांकतां वीरत वाई।
नळ व्रन हणो लई नागद्रहा
निधि सुन पहड़यौ तेणि नियाइ।।
नाग बंगाळ असंख नीजामे
श्रोणि ध्रवी खत्रवाट सहाइ।
असिवर तणी इळा ऊदाउत,
आवी अगैस अेणि उपाइ।।

महाराणा प्रताप के युद्ध-कौशल एवं उनके वीरत्व की प्रशंसा में अनेक समकालीन एवं परवर्ती रचनाकारों ने गीतों की रचना की है। इनमें अधिकांश महाराणा से असबद्ध रहे हैं।जाडा मेहडू ने महाराणा प्रताप को हींदूवाणौ का स्वाभिमानी यौद्धा रूपायित किया है जो आतताइयों के सम्मुख अपनी मूछों को ऐंठता है अर्थात युद्ध के लिए आमन्त्रित करता है। कवि का 'हिन्दुवाणै' से तात्पर्य सिसोदियों के राज्य मेवाड़ से प्रतीत होता है। सारा संसार उस वीर यौद्धा को जानता है जिसका नाम महाराणा प्रताप है। अपनी कुल परम्परा का निर्वाह करते हुवे युद्ध के लिए सदैव तत्पर रहते हुवे पताका फहराता रहता है। मुगल बादशाह अकबर के मन में कांटे के समान चुभता है। यह सब उसकी तलवार के बल पर है। राजा लोग एवं अन्य कटार या तलवार रखते हैं लेकिन भाग जाते हैं। अपने सम्मान का ध्यान नहीं रखते। युद्ध-क्षेत्र में हाथियों की सेना को पराजित करता है एवं युद्ध के लिए सिंह की भांति चढ़ दौड़ता है। मुस्लिम यौद्धा भी राणा की तलवार की शक्ति को स्वीकार करते हैं।

क्षत्रियों का स्वामी अर्थात प्रताप युद्ध क्षेत्र में शत्रु सेना को दिल्ली की ओर पीछे धकेलता है और उनका नाश करता है। सिसोदिया नायक युद्ध में विजय स्तम्भ रोपित करता है। मुगल सेना की अग्रिम पंक्ति को पराजित करता है। कवि द्वारा विरचित गीत का मूल पाठ निम्न हैं -

हठमल्ल मांझी हींदूवांणै,
ताईयां सौं मूंछ तांणै।
जगत सौह जग जेठ जांणै,
इसौ रांणौ आप।।
हेक ताई कुळवाट हालै,
भिड़ण बांधै नेत भालै।
साह अकबर हीयै सालै,
तूझ तेग प्रताप।।
राइहरा अनि रूप राखै,
दुजड़ मेछां मार दाखै।
पुळै जाएं खता पाखैं,
पेखि मांण प्रमाण।।
भिड़े रिणि गज-थाट भांनै,
विढ़ण चाढ़े सिंघ वानै।
मीर सांचौ जोर मानै,
खाग तो खूमांण।।
खत्र धणी खत्रवाट खेलै,
थाट जोगणिपुरा ठेलै।
झूझ भुज्जां प्रांणि झेलै,
विढ़ै जूह विडार।।
रांण रिणि जयथंभ रोपै,
कुंभ करिव हणै कोपै।
लीह नह पतसाह लोपै,
सींघ-संभव सार।।

कवि महाराणा प्रताप को महान कार्यों का प्रारंभ करने का श्रेय देते हुवे लिखता है कि बड़े-बड़े देव मिलकर विचार करते हैं कि सिसोदिया नायक ने अपनी तलवार के बल पर कीर्ति अर्जित करली है। उनके पास सम्पति किस प्रकार आई। वह आगे लिखता है कि महाराणा उदयसिंह के पुत्र के कार्यों को देखकर देवगण आश्चर्य करते हैं कि वह किस प्रकार ऐसा करता हैं। सुयश एवं सम्पति दोनों आमने सामने हैं। तलवार का वार निरन्तर चलता रहता है। अपनी भूमि या राज्य के प्रति प्रताप की आस्था देखकर शिव आश्चर्य चकित है। प्रताप की प्रशंसा में कवि कहता है कि उसके पास यही सम्पति है इसी भाव को मूल गीत में दर्शाया गया है :

पारंभगुर तूझ संपेखै पातल
बड़ा सुरिंद मिळि करै विचार।
किम खगधार चलावी कीरिती
धन आवीयौ स केम खगधार।।
इणि परि तूझ तणै ऊदाउत,
रूद्र सुर अचिरज हूवा रहैं।
सुजस संपति बे आम्बो साम्हो
वाढ़ खड़ग उपरी वहैं।।
प्रम सुर हूवा अचंभम पातल,
धर आसति मेवाड़ धणी।
अति जस केम चालीयौ अणीये,
अथ आयौ किम मुहरि अणी।।

जाडा मेहडू ने उन राजपूत शासकों की ओर संकेत करते हुवे एक गीत की रचना की है जिन्होंने मुगल अधीनता स्वीकार करली है। इस रचना में ऐसे शासकों एवं सिसोदिया नायक के साथ तुलना करके उनको हीन एवं प्रताप को उत्तम बताने का प्रयास किया है। वह लिखता है कि तुम्हारे द्वार पर हाथी घोड़े बंधे रहने एवं हजारी मनसबदार बन कर भी तुम लोग राणा के समक्ष कैसे गर्व कर सकते हो? प्रताप तो तुम्हें भाड़े के टट्टू समझकर परिहास किया करता है एवं कहता है कि शाही दरबारों में जाकर वे केवल अपने पेट की पालना करते हैं।

राणा कहता है कि द्वार पर हाथी रखना, तोशाखाना होना, स्वर्ण संग्रह करना एवं उनका पगड़ी बांधना सर्वथा व्यर्थ है। जबकि वे बादशाह के समक्ष अपनी अबलाओं को पेश करते हैं। कवि का यहां आशय मुगल बादशाह के साथ राजपूत शासकों द्वारा वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने से है। उन्हें राजपूत कहलाने का भी अधिकार नहीं हैं। द्वार पर नक्कारे, दुदुम्भी आदि वाद्य-बजवाना, हयशाला में घोड़े एवं हस्तिशाला में हाथी रखना और बादशाह से सम्मान पाना यह सब गुहिलवंशी राणा व्यर्थ समझता है, ऐसे राजाओं के लिए राणा यही कहता है कि ईश्वर ने उन्हे नर से जानवर बना दिया है।

सिसोदिया राणा सांगा का वंशज राणा प्रताप अकबर के सम्मुख तलवार उठाने वाला है, वह यही कहता है कि खड़ग धारण करते हुवे भी वे सिंह कैसे माने जा सकते हैं, जो दांतों तले तृण दबाया करते हैं और अपनी बेटी एवं स्त्रियों को बादशाह को समर्पित कर उसके चरण छूते हैं। मैं (राणा प्रताप) ऐसे राजाओं को राजा नहीं मानता। यही भावना निम्न गीत में दर्शाई गई है :

हाथी बंध घणां घणां हैवरबंध,
किसूं हजारी गरब करौ।
पातल रांण हंसै त्यां पुरसां,
भाड़ै महलां पेट भरौ।।
सिंधुर किसा किसा तो साहण,
सोना किसा किसा सर-सूत।
महा सबळ ले अबळ समापै
राणो कहै कसा रजपूत।।

जाडा मेहडू द्वारा महाराणा प्रताप पर रचित गीतों से यह तथ्य उजागर होता है कि उसने कभी मुगल अधीनता स्वीकार नहीं की एवं लंबे समय तक उनके विरुद्ध संघर्ष किया। इस लंबे संघर्ष में उसने अपने युद्ध कौशल एवं शौर्य का परिचय दिया। वह उन राजपूत शासकों के विरुद्ध था जिन्होंने मुगल अधीनता स्वीकार करने के बदले में पारितोषिक स्वरूप बड़े-बड़े मनसब हासिल किए। उन्होंने मुगल बादशाह से अपनी बेटियों की शादियां करके अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा को आघात पहुंचाया। कवि ने उपर्युक्त गीतों में जो बातें वर्णित की हैं उनकी पुष्टि अन्य ऐतिहासिक स्रोतों से भी होती है इसलिए इन रचनाओं पर अतिशयोक्ति का आरोप आरोपित करना नितान्त अनैतिहासिक है। कवि की ये रचनाएं महाराणा प्रताप की चारित्रिक विशिष्टताओं को उजागर करने वाली ऐतिहासिक काव्य-रचनाएं हैं।

❑❑❑

गोगुन्दा की स्थापना और नामकरण : मिथक एवम् तथ्य

● अजय मोची

मेवाड़ राज्य जो अपनी आन, बान और शान के लिए प्रसिद्ध है, उसको इतने लम्बे समय तक सशक्त और समृद्धिशाली रूप में स्थापित करने में मेवाड़ के गुहिलोत/सिसोदिया राजाओं और मेवाड़ी सामन्तों, मेवाड़ी जनता के साथ-साथ प्राकृतिक व भौगोलिक पक्ष का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

अरावली पर्वतमाला जिसे कर्नल टॉड ने मेवाड़ का ''प्राकृतिक रक्षक'', "मेवाड़ की शक्ति का शरण स्थल'' कहा है[1] वह पर्वत माला वास्तविक रूप में मेवाड़ के शासकों और समस्त मेवाड़ी जनता हेतु एक वरदान के रूप में अवस्थित है। यह पर्वतमाला जिसे कविराजा श्यामलदास ने मेवाड़ के रक्षक और शत्रुओं को रोकने के कारण इसे अर्वली, आड़ावला, अड़ावली आदि नामों से भी सम्बधित सम्बोधित किया है। [2]

इसी पर्वतमाला में एक ऐसा महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है जो मुख्यतः मध्ययुग में मेवाड़-मुग़ल संघर्ष के समय ही प्रकाश में आया और इस स्थान या क्षेत्र की वजह से ही मेवाड़ राज्य मुग़ल साम्राज्य के विरुद्ध संघर्ष करता रहा व अपनी स्वतन्त्रता और अस्मिता को बनाए रख सका वह है-गोगुन्दा !

गोगुन्दा जिसके पहाड़ी और सघन वनस्पति क्षेत्र का अधिकाधिक उपयोग कर मेवाड़ के महाराणा उदयसिंह, प्रतापसिंह और अमरसिंह ने मुगल शासक अकबर और जहांगीर को मेवाड़ विजित नहीं करने दिया। लेकिन गोगुन्दा के प्राचीन इतिहास के कई प्रश्न प्रकट होते हैं जैसे- क्या गोगुन्दा की स्थापना महाराणा उदयसिंह ने की थी?

गोगुन्दा का नामकरण कैसे हुआ?

गोगुन्दा का प्रारम्भिक इतिहास क्या था?

गोगुन्दा की उपयोगिता किस प्रकार थी? आदि।

ऐसे कई प्रश्नों का उत्तर एक शोधार्थी होने के नाते और स्वयं की रुचि होने के कारण ढूंढने का प्रयास किया है जिसमें महत्त्वपूर्ण है गोगुंदा का नामकरण ।

गोगुन्दा का नामकरण :- किसी स्थान के नाम में उसकी स्थापना और स्थापना के कारणों का पता चलता है। गोगुन्दा के नामकरण के पीछे कुछ जनश्रुतियाँ और किवदंतियाँ प्रचलित हैं, जिनके विश्लेषण से गोगुन्दा के नामकरण का पता चलता है।

(1) रावल गोयदं या गोविन्द के नाम पर :- गोगुन्दा के नामकरण के पीछे एक महत्त्वपूर्ण तथ्य और जनश्रुति मेवाड़ के शासक वर्ग से जुड़ी हुई है। मेवाड़ के प्रारम्भिक शासकों का राज्य उस समय मेवाड़ के दक्षिण व पश्चिमी भू-भाग पर था जिसमें ईडर तक का क्षेत्र भी

सम्मिलित था। तात्कालिक मेवाड़ (6–7 वी शताब्दी) ईडर, आबू, सिरोही, गोगुन्दा, आहड, नागदा आदि क्षेत्रों में ही फैला हुआ था, जिसका पता हमें मेवाड़ के प्रारम्भिक शासकों और उनके अभिलेखों से चलता है। नागादित्य द्वारा नागदा नगर बसाना देवादिता द्वारा देलवाडा नगर बसाना,[3] शीलादित्य का सामोली (कोटडा) शिलालेख [4], अपराजित की कुण्ड़ा ग्राम प्रशस्ति,[5] बाप्पा रावल द्वारा एकलिंग जी मंदिर स्थापना व उसके बाद चित्रकूट (चित्तौड़) पर शासन करना आदि से मेवाड़ राज्य के विस्तार का पता चलता है। लेकिन बापा रावल के बाद भी मेवाड़ के शासकों ने अपना प्रभाव क्षेत्र मेवाड़ के दक्षिणी–पश्चिम पहाड़ी भू–भाग में बनाये रखा और कई नगरों व मंदिरों का निर्माण और जीर्णोद्धार कर अपना प्रभाव बनाए रखा। विभिन्न स्त्रोतों और मेवाड़ की वशांवलियों का अध्ययन करने पर गोगुन्दा की स्थापना का एक महत्वपूर्ण पहलू सामने आता है। वह है मेवाड़ के शासक रावल गोयंद द्वारा गोगुन्दा बसाना।

मेवाड़ की वंशावलियों जैसे सूर्यवंश और राजावली बही में क्रमशः रावल गोयंद और राजावली वहीं में रावल गोविन्द का नामोल्लेख आता है, जिसका राज्याभिषेक गोगुन्दा में होना मिलता है।[6] इसकी पुष्टि मेवाड़ के शासकों की सीसोद वंशावली से भी होती है। रावल खुमाण (खमनौर गांव बसाया) के पुत्र रावल गोयंद का उल्लेख है जिन्होने गोगुन्दा बसाया था।[7]

रावल गोयंद की माता का नाम प्रेमबाई परमार था। इनकी 18 रानियाँ, 2 पासवान (खवासन) और 15 पुत्र हुए थे।[8] गोयंद के नाम पर गांव का नाम गोगुन्दा होना अधिक तर्कसंगत् लगता है जिसके पीछे कई तर्क हैं :

जैसे सिसोदं वशांवली में वर्णित गोगुन्दा का भौगोलिक वर्णन वर्तमान गोगुन्दा के समान ही है। वंशावली में लिखा है कि गोगुन्दा को ऊँचा अर्थात् उॅचाई वाला स्थान बताया है, और वास्तविक रूप में दक्षिण मेवाड़ में गोगुन्दा सर्वाधिक ऊँचाई पर स्थित है। गोगुन्दा की ऊंचाई वर्तमान में 2757 फीट है और यह आस पास के क्षेत्रों में सर्वाधिक ऊँचाई वाला भू–भाग है।[9] साथ ही वंशावली में गोगुन्दा से बहने वाली 4 नदियों का नाम भी लिखा है जो वर्तमान में भी गोगुन्दा से निकलती हैं। इनमें वाकल नदी, जो गोगुन्दा से 5 किमी दूर दक्षिण दिशा में दादिया गांव के पास राखी और तुम्बा नामक पहाड़ियों के मध्य स्थित अंद्रेत नामक जगह से निकलती है और दक्षिण में ओगणा मानपुर तक जाती है। फिर यह नदी पश्चिम में मुडकर मानपुर से कोटडा होते हुए ईडर राज्य में साबरमती नदी में मिल जाती है।[10]

दूसरी बेड़च नदी जिसे उदयपुर में प्रवाहित होने के कारण आयड़ नदी के नाम से भी जाना जाता है। इसकी उत्पत्ति का स्थान गोगुन्दा के पूर्व में स्थित गोगुन्दा के प्राचीन व मध्यकालीन प्रवेश द्वार अम्बामाता मंदिर के तलहटी में स्थित बांसडा गांव से माना जाता है।[11] गोगुन्दा की पहाड़ियों से निकलकर यह नदी झालों का गुडा, भादवी गुडा, नया गुडा हूदर, मदार, थूर, चिकलवास होते हुए फतहसागर झील में पहुंचती है जहाँ से यह उदयसागर झील में आने के बाद बेड़च नदी के नाम से चित्तौडगढ़–मांडलगढ़ तक जाती है।[12]

तीसरी नदी बेई का नाम वंशावली में लिखा है जो वर्तमान में पानेर नदी के नाम से जानी जाती है। बेई बनास की सहायक नदी है जो गोगुन्दा से 3 किमी दूर उत्तर दिशा में स्थित सेमराल गांव के भुज के नाके से निकल कर रावलिया, पानेर, करदा होते हुए कठार नदी में मिलकर बाघेरी का नाका, नंदसमद होते हुए बनास नदी में मिल जाती है।

चौथी साथ्रमति / साबरमती नदी का नामोल्लेख है जिसका उद्भव गोगुन्दा से 30 किमी दूर उत्तर-पश्चिम दिशा में भोराट के पठार में स्थित सरवन की पहाड़ियों से होता है।[13] सरवन की पहाडियों से निकलने वाली इस महत्तपूर्ण नदी के जल को रोकने के लिए राजस्थान सरकार द्वारा सेई बांध भी बनाया गया है, लेकिन सरवन की पहाडियों में अत्यधिक वर्षा होने के कारण इसका बहुत सारा पानी बह जाता है और यह नदी देवला, सांमोली, कोटड़ा, मामेर, महाद होते हुए ईडर व गुजरात में प्रवेश करती है। साबरमती नदी का केवल 10 प्रतिशत भाग ही राजस्थान में है और राजस्थान द्वारा इस नदी के पानी का भी बहुत कम ही उपयोग किया जाता है।

इस प्रकार सीसोद वंशावली में वर्णित गोगुन्दा गांव का भौगोलिक वर्णन वर्तमान गोगुन्दा के समान ही है। साथ ही रावल गोयंद का राज्य विस्तार भी वर्तमान राजनैतिक परिस्थितियों के अनुरूप ही है। वशांवली में लिखा है कि गोयंद ने गिरिनार राज्य के राव सुर जी यादव को हराकर दक्षिण का क्षेत्र जीता और राव ने अपनी मोरवी पुत्री का विवाह रावल से किया और आधीनता स्वीकार की। वे दक्षिण क्षेत्र से दंड भी वसूलते थे।[14]

गोगुन्दा से दक्षिण में ईडर, सौराष्ट्र, कच्छ व गिरनार का क्षेत्र आता है और तात्कालिक मेवाड़ राज्य जो गोगुन्दा के आस-पास था और चित्तौड़ पर अधिकार के बाद भी दक्षिण में जाने हेतु यह मार्ग सर्वाधिक उपयुक्त था। गोगुन्दा से दक्षिण में जाने हेतु वाकल व साबरमती नदी सहारे ईड़र, पालनपुर, दांता, पाटन कच्छ और सौराष्ट्र तक जाया जाता था। यह प्राचीन व्यापारिक मार्ग भी था।[15]

इस प्रकार भौगोलिक और राजनैतिक रूप से वंशावली में जो गोगुन्दा का वर्णन मिलता है वह एकदम सही है और रावल गोयंद द्वारा इस गांव/नगर को बसाना और 10 वर्ष तक यहॉ से राज्य करना गोगुन्दा गांव की महत्ता और नामकरण को दर्शाता है। गोयंद से अप्रभंश होकर गांव गोयंदा, गोगुंदा, गोगुन्दा हो गया है।

(2) गोगुन राम मेहता के नाम पर :- मेहता गोगुन्दा के नामकरण पर एवं एक अन्य महत्वपूर्ण जनश्रुति गोगुन राम बोहता ब्राहृण के नाम पर गोगुदां नाम पड़ना आम लोकजन में काफी प्रसिद्ध है।[16]

गोगुन्दा में रहने वाले पालीवाल ब्राह्मण समाज के लोग गोगुन्दा से लेकर सायरा, कुम्भलगढ़, भाणुजा, नाथद्वारा, राजसमंद, रेलमगरा आदि क्षेत्रों में विस्तृत रूप से फैले हुए हैं वे गोगुन्दा गांव के नाम को अपने पूर्वज गोगुन राम जी के नाम पर होना मानते है।

जनश्रुति में प्रचलित है कि गोगुन्दा का पुराना गांव जो वर्तमान राष्ट्रीय राजमार्ग 27 से पूर्व दिशा में स्थित शीतला माता जी मंदिर के पास था जिसका नाम घोइन्दा था। यहाँ पर दो भाई गंग देव जी और गोगुन देवराम रहने आये ! जैसे-जैसे परिवार बढ़ता गया तो दोनों परिवारों में भी छोटी-मोटी बातें होने लगी।[17] एक दिन किसी बात पर गोगुन राम जी और उनकी भाभी (गंगू देव की पत्नी) के बीच कुछ बात हो गई तो गोगुन राम जी घोइन्दा गांव छोड़कर वर्तमान गोगुन्दा में स्थित चारभुजा जी के मंदिर (जो वर्तमान में गोगुन्दा के मध्य में मुख्य बाजार में स्थित है) के समीप आ गये। पहले यह जगह वीरान थी और वर्तमान मंदिर की जगह एक बरगद का बड़ा वृक्ष था, उसके नीचे अपने साथ लाये चारभुजा नाथ की मूर्ति को पेड़ के नीचे रखकर सो गये। सपने में उनको साक्षात् गोविन्द जी (विष्णु जी) ने दर्शन दिये और कहा "तुम फ्रिक मत करो मैं तुम्हारे साथ हूँ। कहीं मत जाना और यहीं रहकर मेरी सेवा करना !'' इस प्रकार परमात्मा के वचन सुनकर गोगुन राम जी वहीं रहे और धीरे-धीरे पुराने गांव से लोग नये गांव में आते गये और स्वप्न में गोविन्द जी के दर्शन के कारण गोगुन राम जी को लोग गोविन्द जी भी कहने लगे।

गोगुनराज जी के प्रति लोगों में श्रद्धा अधिक थी, अतः धीरे घोइन्दा गांव खाली होता गया और गोगुन राम जी द्वारा बसाया गांव बसता चला गया।

गोगुन राम जी के नाम पर गॉव का नाम गोगुन्दा पड़ना और उनके दूसरे नाम गोविन्दजी के कारण गोगुन्दा का पुराना नाम गोगुन्दा, गोइन्दा आदि भी माना जाता है।

गोगुनराम जी का वंशक्रम आगे बढ़ता चला गया और उनकी 2 पत्नियाँ थीं, जिनसे क्रमश चाटियाखेडी गांव में जोशी (ब्राह्मण) और सेमराल गांव के पालीवाल/मेहता (ब्राह्मण) आज भी निवास करते हैं।

गोगुन्दा सहित आस-पास के पालीवाल ब्राह्मण समाज वाले पुराने गांव घोइन्दा में स्थापित "बायण माता" मंदिर जिसे बाण माता और आमजन में "सा माता" भी कहते हैं, को मानते हैं, जिसके नाम के पीछे भी एक कहानी है। गॉव की कुम्हारिन एवं अन्य स्त्रियाँ उस रास्ते से मिट्टी व छाछ लेने दूसरे गांव जाती थीं तो आते हुए थक जाती। तो वे सांस लेने या आराम करने यहां रुकती थीं। मेवाड़ी भाषा में सांस को सा/शा भी कहते हैं। अतः मंदिर का नाम सा माता भी पड़ा। पालीवाल ब्राह्मण बायण माता को अपनी कुल देवी मानते हैं। साथ ही दोनों प्रमुख गांव चाटिया खेडी और सेमटाल के मध्य सीमा का निर्धारण भी ये लोग बायण माता मंदिर से ही मानते हैं।[18]

इसके अतिरिक्त वर्तमान में सेमराल गांव के निवासी बायण माता मंदिर, शीतला माता मंदिर (बायण माता मंदिर के सामने) और बाजार में स्थित चारभुजा जी के मंदिर को अपने अधिकार क्षेत्र में होना मानते हैं और सामाजिक व धार्मिक क्रियाकलापों में प्रथम निमन्त्रण इन्हीं स्थानों पर देते हैं।

इस प्रकार पालीवाल ब्राह्मणों की पोथी और आमजन द्वारा वर्णित इस इतिहास के

आधार पर गोगुन्दा गांव की स्थापना और नामकरण गोगुन राम जी मेहता के नाम पर होने की जनश्रुति काफी प्रसिद्ध है।

(3) गौ (गायों) के घेरे (गुढ़ा) से नामकरण

गोगुन्दा नाम के नामकरण में गौ़गुड़ा अर्थात् गायों के गढ/रहवास से गोगुन्दा शब्द की उत्पत्ति की एक अन्य जनश्रुति भी प्रचलित है। यह मत मोहनलाल जी बोल्या ने अपनी पुस्तक ''मेवाड़ में जैन तीर्थ'' में गोगुन्दा के नामकरण को गायों व पशुओं से जोड़कर लिखा है।[19]

वैसे गोगुन्दा का अगर सन्धि विच्छेद करें तो गौ अर्थात् गायें और गुन्दा अर्थात् झुण्ड से होता है।

प्राचीन व मध्यकाल में समस्त व्यापारिक गतिविधियाँ जैसे वस्तुओं का आदान-प्रदान और व्यापारिक यात्राओं हेतु पशुओं का उपयोग किया जाता था। इन पशुओं में मुख्य रूप से गाय-भैंस और घोड़ों का अधिकाधिक उपयोग किया जाता था। पशुओं पर सामान लाद कर व्यापारिक गतिविधियों का क्रियान्वयन व व्यापारिक यात्राएँ होती थीं। गोगुन्दा प्राचीन व मध्यकालीन प्रमुख व्यापारिक मार्ग पर अवस्थित था, और इस मार्ग से खम्भात की खाड़ी से आने वाले व्यापारिक काफिले उत्तर में अजमेर, जयपुर व दिल्ली तक जाते थे।

गुजरात से दिल्ली और पंजाब सिंध-अफगानिस्तान तक का व्यापारिक मार्ग गोगुन्दा होकर जाता था। यह व्यापारिक मार्ग गुजरात खम्भात की खाड़ी से अहमदाबाद, पालनपुर, ईडर, पानरवा, ओगणा, गोगुन्दा होते हुए उत्तर-दिशा में कुम्भलगढ़ और कुम्भलगढ़ से यह दो मार्गो में विभक्त हो जाता था। कुम्भलगढ़ से एक मार्ग पश्चिम दिशा में मारवाड़ के रास्ते, सिंध, अफगानिस्तान तक जाता था और दूसरा मार्ग कुम्भलगढ़ से उत्तर-पूर्व दिशा में दिवेर, मोही-मदारिया, भीलवाड़ा, अजमेर, जयपुर होता हुआ दिल्ली तक जाता था। इस प्रकार गोगुन्दा एक प्रमुख व्यापारिक केन्द्र के रूप में था जो गुजरात से आने वाले व्यापारिक काफिलों हेतु आराम करने, अपना माल बेचने और पशुओं हेतु चारा-पानी की व्यवस्था करने के लिए उपयुक्त स्थान था।

ईडर के बाद पानरवा और ओगणा वाला पहाड़ी भाग सघन वानस्पतिक और चढ़ाई वाला क्षेत्र है। व्यापारिक काफिलों द्वारा इस क्षेत्र में अधिक निवास नहीं किया जाता था क्योंकि इस क्षेत्र में रहने वाली भील जनजाति द्वारा उन पर आक्रमणों व लूट पाट का भय हमेशा बना रहता था। अतः वे इस रास्ते को निकालकर और चढ़ाई को जल्दी पार कर गोगुन्दा आ जाते और गोगुन्दा में अपनी व अपने वाहनों (पशुओं) की थकान मिटाते थे।

गोगुन्दा प्राचीन समय से व्यापारिक केन्द्र के रूप में रहा है। गोगुन्दा से पूर्व दिशा में ईसवाल व आहड़, उत्तर दिशा में कुम्भलगढ़ जिसे सम्प्रति कालीन भी माना जाता है, उत्तर-पश्चिम दिशा में मारवाड़ का क्षेत्र जो राष्ट्रकूटों और राठौड़ों के क्षेत्र के रूप में और पश्चिम-दक्षिण दिशा में परमारों की राजधानी चन्द्रावती, आबू, सिरोही आदि क्षेत्रों से दर्रो व

जलमार्गो से सीधा जुड़ा है।

प्राचीन व्यापारिक मार्गो में केन्द्रीय स्थिति होने के कारण चाहे वह जल मार्ग हो या दर्रों और नालों के माध्यम से, गोगुन्दा चारों दिशाओं से जुड़ा हुआ है। साथ ही गोगुन्दा ऊँचाई पर स्थित है, जिससे यहां से चारों तरफ नजर भी रखी जा सकती है। अतः व्यापारिक गतिविधियों हेतु यह उपर्युक्त स्थान था। इस कारण व्यापारिक वर्गो द्वारा इस मार्ग का उपयोग कर गोगुन्दा आते और यहाँ विश्राम करके स्वयं और अपने पशुओं हेतु खाने-पीने की व्यवस्था करते थे। चारों दिशाओं से व्यापारिक वर्गों का आना जाना होता रहता था, जिससे पशुओं का झुण्ड सा बना रहता था। अतः व्यापारिक काफिलों में आने वाली गायें जब एक साथ मिल जाती थीं और उन गायों के झुण्डों के नाम पर गोझुण्डा, गोगुड़ा, गोगुण्डा से अप्रभंश नाम गोगुन्दा पड़ा हो सकता है।

(4) गोविन्द सिंह राठौड़ के नाम पर :– गोगुन्दा के नामकरण के पीछे एक और मत प्रचलन में है जिसके अनुसार गांव का नाम गोविन्द सिंह राठौड़ के नाम पर गोविन्दा या गोगुन्दा पड़ा है। इस मत को मोहनलाल जी बोल्या ने अपनी पुस्तक में भी लिखा है।[20]

गोगुन्दा पर झाला राजवंश के आधिपत्य से पहले राठौड़ों की ईड़र शाखा का आधिपत्य था।

मेवाड़ के महाराणाओं द्वारा चित्तौड़ को राजधानी बनाने के बाद आहाड़, नागदा, गोगुन्दा और मेवाड़ के दक्षिणी भाग पर गहलोत वंश का प्रभाव कम होता गया। दक्षिण मेवाड़ के कई भागों पर राठौड़ों की दक्षिण शाखा, जो 13 वीं शताब्दी में ईडर में स्थापित हुई, ने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। राठौड़ वंश के संस्थापक पुरूष राव सीहा ने पालीवाल ब्राह्मणों के सहयोग से 1243 ई. में मारवाड़ में अपना राज्य स्थापित किया था। उनके दूसरे पुत्र राव सोनग ने ईडर में राठौड़ों की दूसरी शाखा स्थापित की।[21]

राव सीहा द्वारा द्वारका की यात्रा करते समय अनिहलवाड़ा पाटन आदि जगह पर मैत्री सम्बन्ध बनाये और उनके दूसरे पुत्र सोनग ने ईडर राज्य पर अधिकार कर संवत् 1331 (ई 1274) में राठौड़ राजवंश की नींव रखी।[22]

ईड़र पर उस समय कोली जाति के राजा सामलिया सोड़ का राज्य था। राव सीहा के बड़े पुत्र आसथान ने वहां के मंत्री की सहायता से राजा को मार दिया और उसके राज्य पर अधिकार कर अपने छोटे भाई सोनग को राज्य दे दिया। ये राठौड़ ईडरिया राठौड़ कहलाते हैं।[23]

ईडर के शासकों ने मेवाड़ के दक्षिण भू-भाग और खासकर छप्पन के क्षेत्रों में अपना आधिपत्य स्थापित कर रखा था। गोगुन्दा पर भी ईडर के राठौड़ों का आधिपत्य था। गोगुन्दा दक्षिण जाने का प्रमुख व्यापारिक व धार्मिक मार्ग था। अतः ईडर के राठौड़ों ने इसको सदैव अपने अधिकार में रखा था। गोगुन्दा सहित मेवाड़ के दक्षिणी भू-भाग और जावर-सराड़ा समेत समस्त छप्पन पर उनका अधिकार था।[24]

गोगुन्दा का महल जिसे मेवाड़ी भाषा में 'रावला' भी कहा जाता है उसका प्रारम्भिक स्वरूप ईडर के राठौड़ों द्वारा बनाया हुवा है। इसीलिए गोगुन्दा के महल को ईडरिया महल भी कहा जाता है।[25]

गोगुन्दा ईडर के राठौड़ों की अंतिम चौकी के रूप में था। व्यापारिक गतिविधियों पर नियंत्रण रखने हेतु गोगुन्दा को ईडर के शासकों ने थाने के रूप में स्थापित कर रखा था।

गोगुन्दा के प्रथम राजराणा कानसिंह ने गोगुन्दा पर ईडर के 500 व्यक्तियों के थाने को हटाकर झालाओं का राज स्थापित किया था।[26]

इस तरह गोगुन्दा पर ईडर के राठौड़ों का राज्य और अधिकार होना स्पष्ट प्रतीत होता है, लेकिन उनके किसी राजा का नाम गोविन्द सिंह नहीं है। ईडर राठौडों की वंशावली में ईडर के किसी भी शासक का नाम गोविन्द सिंह नहीं मिलता है[27]। यह संभव है कि किसी प्रांतीय सेनापति का नाम गोविन्द रहा हो परंतु उसके नाम पर भी गोगुंदा का नामकरण होना सही प्रतीत नहीं होता है। अतः गोविन्द सिंह राठौड़ के नाम से गोगुन्दा नाम की उत्पति हुई हो यह मुमकिन हीं लगता।

(5) झाला गंगा सिंह के नाम पर :- गोगुन्दा के नामकरण में एक अन्य मत झाला राजवंश में लीबंडी के झाला परिवार से आने वाले झाला गंगा जी के नाम पर भी कुछ लोग मानते हैं। ''झाला वशं माहिती'' नामक पुस्तक में गोगुन्दा गांव की स्थापना को झाला राजवंश से जोड़ा है। गुजरात के सौराष्ट्र में झाला-मकवाना राजवंशों के कई क्षेत्र व राज्य हैं, जिनमें हलवद, बाकानेर, ध्रांगधा, लखतर बढ़वाण, लीबंडी आदि प्रमुख हैं।[28]

लीबंडी राज्य की स्थापना कीर्तिगढ़ (सिंध) के शासक केसर देव मकवाना के पुत्र हरपालदेव के पुत्र ने रखी। हरपालदेव ने कीर्तिगढ़ राज्य पर हमीर सुमरा के अधिकार होने के बाद गुजरात-पाटन में आ गये और पाटन पर तत्कालिक शासक कर्णदेव सोलंकी से पारिवारिक सम्बन्धों के आधार पर एवं दैवीय शक्ति से 2800 गांवों पर अधिकार कर पाटड़ी राज्य की नींव वि. स. 1156 (1099) ई में रखी।[29]

इन्हीं हरपालदेव के बड़े पुत्र सोठाजी को पाटड़ी जागीर और दूसरे पुत्र मांगुजी को जांबू (कोठी कुंदणी) सहित 64 गांव जागीर में मिले और उन्होंने लीबंडी राजधानी बनाकर झालाओं का दूसरा राज्य स्थापित किया।

मांगू जी के बाद उनके पुत्र मधुपाल जी गंठ जाबू लीबंडी की गद्दी पर बैठे। मधुपाल जी के 2 पुत्र हुए- धमल जी और गंगा जी ! बडे पुत्र धमल को पिता की मृत्यु के बाद जाबूगढ़ का राज्य मिला और दूसरे पुत्र गंगा जी नये राज्य और क्षेत्र की तलाश में दक्षिण मेवाड़ की तरफ आये और सिरोही के रास्ते मेवाड़ के पहाड़ी इलाकों में 12 गांव जीत कर गोगुन्दा गांव बसाया और अपनी गद्दी व राज्य स्थापित किया।[30]

इस प्रकार गंगाजी के नाम गांव का नाम गोगुंदा पड़ा। लेकिन वह बात सहीं प्रतीत

नहीं होती है, क्योकि मेवाड़ में झाला मकवाना राजवंश का आगमन और जागीर प्राप्ति महाराणा रायमल्ल के समय हलवद से आये झाला अज्जा और सज्जा के आने के बाद हुयी थी। मेवाड़ में झाला राजवंश के प्रथम 2 ठिकाने सादड़ी और देलवाड़ा हुए, उसके बाद महाराणा अमरसिंह, महाराणा कर्णसिंह व महाराणा जगतसिंह के समय झालाओं का तीसरा ठिकाना गोगुन्दा स्थापित हुआ।[31] इस प्रकार गोगुन्दा ठिकाना झालाओं को महाराणा जगतसिंह के समय मिला था। अतः झाला गंगा जी के द्वारा गोगुन्दा गांव बसाने का प्रमाण सही प्रतीत नहीं होता है।

इस प्रकार गोगुन्दा गांव की स्थापना और नामकरण के पीछे निम्न प्रमुख तर्क व मान्यताएँ हैं, जिनमें रावल गोयंद, गोगुनराम मेहता और गौ/गायों द्वारा नामकरण होना सही प्रतीत होता है जिनका निष्कर्ष निम्न है –

रावल गोयंद द्वारा नामकरण व स्थापना के पीछे मेवाड़ की वंशावलियों, चारण, भाटों की वंशावलियों के साथ–साथ सीसोद वंशावली, राजावली बही और सूर्यवंश वंशावली का आधार मानकर गोगुन्दा की उत्पति को उनसे जोड़ा जाना सही प्रतीत होता है। लेकिन गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा गोविन्द / गोवंद नाम के किसी शासक का होना संदिग्ध मानते हैं, इसके पीछे महत्वपूर्ण तर्क वंशावली में संवत् का गलत लिखा होना प्रमुख है। सीसोद वंशावली व अन्य वंशावलियों में रावल गोयंद का समय वि. सं. 352 अंकित है, जिसे शंका का आधार माना जाता है। लेकिन डॉ. राजेन्द्रनाथ पुरोहित इसे मात्रा की भूल और अंक का मिट जाना मानते हैं। वंशावली में बाप्पा रावल का संवत् 191 अंकित है वह 791 वि. स. होगा, जो अक्षर के आगे अर्थात् 7 के आगे लगी मात्रा के मिट जाने से 791 की जगह 191 हो गया है। इस प्रकार सही मिलान करने पर रावल गोयंद का समय 952 सवंत् (ई.895) मिलता है।[32]

साथ ही ओझा जी ने रावल खुम्माण के बाद मत्तट नामक शासक का नाम लिखा है, जिसका आधार उन्होंने चाटसू की प्रशस्ति के आधार पर लिखा है। जबकि एकलिंग महामात्य में खुम्माण के पुत्र को श्री विष्णु के अवतार के रूप में वर्णित लिखा है और उसका नाम भी विष्णु के नाम पर गोविन्द होना वर्णित है।[33]

इस प्रकार खुम्माण के बाद उनके पुत्र का नाम मत्तट भी हो सकता है, जिसे मेवाड़ी अलंकरण और छन्द परम्परा में गोविन्द और गोयंद नाम लिखा गया हो, सही प्रतीत होता हैं। साथ ही गोविन्द या गोयंद द्वारा गोगुन्दा की स्थापना का समय और उत्खनित सामग्रियों के आधार पर 8–9वी शताब्दी है। पुराने गांव घोइन्दा की बसावट के आधार पर उसका कालक्रम 8–9वी शताब्दी के लगभग ही स्पष्ट हो रहा है।[34] इस प्रकार नामकरण व स्थापना में गोगुन्दा की स्थापना रावल गोयंद/गोविन्द के नाम से ही होना सही प्रतीत होता हैं।

गोगुन राम मेहता के नाम पर गोगुन्दा की स्थापना व नामकरण में उत्खनित स्थल और अन्य साक्ष्यों के आधार पर पुराना गांव घोइन्दा की बसावट दो चरणों में होना दिखाई देता है।

उत्खनित स्थल पर 2 विकास चरण दिखाई देते हैं, जिनमें पहला चरण 6–9वीं शताब्दी तक का और दूसरा चरण 12वीं से 14 वीं शताब्दी का मिलता है।[36]

मेवाड़ में पालीवाल ब्राह्मणों का आगमन मारवाड़ के पाली–गोड़वाड़ क्षेत्र से हुआ था और पाली पर मुस्लिम आक्रमण (13वीं शताब्दी) से भारी नरसंहार हुआ और पालीवाल ब्राह्मणों को अपनी जान बचाकर मेवाड़ व अन्य क्षेत्रों में आना पड़ा। जिनमें गंग देव जी और गोगुन राम जी द्वारा गोगुन्दा में आकर रहना और मेवाड़ के महाराणाओं के आश्रय में रहकर अपना वंश बढ़ाना सही प्रतीत होता है। पालीवाल ब्राह्मणों की पोथियों एवम् पालीवाल ब्राह्मण इतिहास' आदि ग्रथों में मारवाड़ के पाली से ब्राह्मणों का मेवाड़ में आना और आश्रय लेना स्पष्ट रूप से वर्णित है।

इस प्रकार गगूं देव की और गोगुन राम जी ने रावल गोयंद द्वारा स्थापित गोगुन्दा को लम्बे समय बाद पुनः नगर के रूप में स्थापित किया और स्थाई रहवास शुरू किया।

गायों के नाम पर गोगुन्दा का नामकरण होने की धारणा भी सही प्रतीत होती है। प्राचीन व मध्यकाल में पशु धन व गायों की महत्ता अधिक थी और व्यापारिक क्रियाकलापों और यात्राओं को पशुओं के द्वारा ही पूर्ण किया जाता था। पशुओं में भी गायों का अधिक महत्व था। गोगुन्दा प्राचीनकाल से व्यापारिक केन्द्र था और व्यापारिक नगर जिसे ताम्बावती नगर भी कहा जाता था।[37] पशुओं के द्वारा आवागमन होता था और गोगुन्दा के पास भी कई ऐसे गांव व नगर हैं जिनका नाम गायों के ऊपर पड़ा है। जैसे गोड़वाड़ (गौद्वार = गौद्वार, अप्रभंश होकर गोड़वाड़ बना), गांयफल आदि। साथ ही अन्य गांवों के नाम भी जानवरों के नाम पर पड़े जैसे रीछेड़ (रीछ अधिक होने पर), बाघपुरा (बाघ अधिक होने पर), चित्रावास (चित्रा/तेंदुआ–वास अधिक होने पर) आदि। साथ ही पदराड़ा और गोड़वाड़ के मध्य एक नाल (रास्ते) को चौपा नाल भी कहते हैं जिसका अर्थ होता है–चौपा अर्थात् पशुओं की नाल।

इस प्रकार गोगुन्दा की स्थापना और नामकरण में विभिन्न मतों के अध्ययन के बाद गोगुन्दा स्थापना दो काल खण्डों में होना और नामकरण के पीछे रावल गोयंद, गोगुन राय मेहता और गायों/गौ के द्वारा होना सही प्रतीत होता है।

संदर्भ :–

(1) जेम्स टॉड कृत **राजस्थान, राजपूत कुलों का इतिहास**, सम्पादक एवं अनुवादक रघुबीर सिंह, मंगल प्रकाशन, जयपुर, 1963, पृ. सं. 23,25

(2) श्यामलदास, **वीर विनोद**, राजयन्त्रालय, उदयपुर, 1886 मोतीलाल बनारसीदास पुनमुर्द्रण दिल्ली, 1986, पृ. सं. 101–104

(3) रणछोड़ भट्ट **अमरकाव्यम्**, सम्पादक डॉ. शक्ति कुमार शर्मा 'शकुन्त' व राजेन्द्र प्रसाद भटनागर, साहित्य संस्थान, उदयपुर, 1985, पृ. सं. 25

(4) गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, **उदयपुर राज्य का इतिहास**, राजस्थानी ग्रंथाकार,

जोधपुर, चतुर्थ 2015, पृ. सं. 108
(5) **वीर विनोद** पृ. सं. 272
(6) बड़वा देवीदान कृत, **मेवाड़ के राजाओं की राणियों, कुंवरों और कुंवरियों का हाल** सं देवीलाल पालीवाल व गिरीशनाथ माथुर, साहित्य संस्थान, उदयपुर, 1985 पृ. सं. 46 व 53
(7) (i) **अमरकाव्यम्** , पृ. सं. 25
(ii) बड़वा देवीदान, पृ. सं. 46-47 व 53
(8) (i) **सिसोद वंशावली एवं राजस्थान के रजवाड़ों की वंशावलिये,** सम्पादक हुकमसिंह भाटी, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर, 1995, पृ. सं. 289-89
(ii) बड़वा, पृ. सं. 46, 53
(9) (i) **वीर-विनोद,** पृ. स. 102
(ii) के. डी. एर्स्कीन, **राजपूताना गजेटियर,** विन्टेज बुकस, 1992, पृ. सं. 110
(iii) **सीसोद** पृ. सं. 28
(10) (i) **उदयपुर** पृ. सं. 18
(ii) **राजपूताना** पृ. सं. 8
(11) व्यक्तिगत साक्षात्कार डॉ. देव कोठारी, पूर्व निदेशक, साहित्य संस्थान, 7/12/2017 उदयपुर, समय दोपहर 2 बजे
(12) उदयपुर पृ. सं. 18
(13) राम वल्लभ सोमानी, **हिस्ट्री ऑफ मेवाड़,** सी. एल रांका एण्ड को, किताब महल, जयपुर, 1976, पृ. सं. 6
(14) **सीसोद,** पृ. सं. 28
(15) हिस्ट्री, पृ. सं. 7
(16) **महाराणा प्रताप स्मृति ग्रंथ,** सम्पादक देवीलाल पालीवाल, साहित्य संस्थान, उदयपुर, 1969, पृ. सं. 216
(17) व्यक्तिगत साक्षात्कार श्रीमान हीरालाल जी पालीवाल एवम् शिवशंकर पालीवाल, प्रमुख पुजारी-बायण माता मंदिर, गोगुन्दा, 9/12/2017 समय साथ 5 बजे गोगुन्दा।
(18) उपरोक्त
(19) मोहनलाल बोल्या **मेवाड़ के जैन तीर्थ,** प्रथम भाग, चौधरी ऑफसेट, उदयपुर, 2000, पृ. सं. 182
(20) उपरोक्त
(21) ईश्वरसिंह मड़ाढ, **राजपूत वंशावली,** चेतना प्रकाशन, नई दिल्ली, 1987, पृ. सं. 75, 79

(22) (i) विशवेंद्रनाथ रेऊ, **मारवाड़ का इतिहास** भाग प्रथम, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, तृतीय संस्करण, 2009, पृ. सं. 42-43
(ii) **सीसोद**, पृ. सं. 77
(23) **मारवाड़**, पृ. सं. 42-48
(24) उपरोक्त।
(25) **प्रताप स्मृति**, उपरोक्त, पृ. सं. 216
(26) **गोगुन्दा की ख्यात**, सम्पादक हुकमसिंह भाटी, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर 1997, पृ. सं. 12
(27) **सीसोद**, उपरोक्त, पृ. सं. 77-78
(28) (i) धीरूमा जोरावर सिह राणा, **झालावंश माहिती**, लखतर, सौराष्ट्र, 2003, पृ. सं. 10-23
(ii) **वीरविनोद** उपरोक्त, भाग तृतीय , पृ.सं. 1470-71
(29) (i) उपरोक्त पृ. सं. 2-3
(ii) देवीलाल पालीवाल और राजराणा हिम्मतसिंह, **झाला राजवंश**, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, प्रथम 2004, पृ. सं. 43-44
(30) **झाला वंश**, उपरोक्त, पृ. सं. 20
(31) (i) **वीर विनोद**, उपरोक्त, प्रथम पृ. सं. 138-139, द्वितीय 232-36
(ii) **गोगुन्दा**, उपरोक्त, पृ. सं. 10-13
(32) व्यक्तिगत साक्षात्कार डॉ राजेन्द्र नाथ पुरोहित, 8 सितम्बर 2017, सीतामऊ, मंदसौर, सुबह 9 बजे।
(33) सम्पादक प्रेमलता शर्मा, **एकलिंग महात्म्यम्**, मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी, 1976, पृ. सं. 97-105, 124-151
(34) A Late historical and Medieval Settlement at Gugunda by J S Kharakwal, Dev Kothari and K P Singh, **Shodh Patrika**, Sahitya Sansthan, Udaipur, Vol 65, 2015, PP.: 63-68
(35) उपरोक्त
(36) रेवाशंकर पुरोहित, **पालीवाल ब्राह्मण इतिहास एवं सरसल वंश प्रबोधिनी**, उदयपुर, 1986, पृ. सं. 24-25
(37) व्यक्तिगत देव कोठारी का साक्षात्कार।

❑❑❑

बीकानेर अंचल के प्रमुख ऐतिहासिक शिलालेख

● स्व. डॉ. परमेश्वर सोलंकी

बीकानेर अंचल भौगोलिक दृष्टि से अतिप्राचीन है। रामायण काल से पूर्व यहां अर्बुदगिरी, द्रोणगिरि, आदि ऊंचे पठारी भूभागों को छोड़कर सर्वत्र जल भरा क्षेत्र था किन्तु महाभारतकाल में सिरसा (शरीषपत्तन) एक नदी का मुहाना मात्र रह गया और सरस्वती अनूपगढ़ क्षेत्र में अन्तःसलिला हो गई। कालान्तर में सरस्वती विलुप्त होने के स्थान को ''विनशन'' कहा जाने लगा और यह पुष्करायतन, कपिलापतन आदि के साथ तीर्थस्थल बन गया।

पिछले वर्षों में पुरातत्व विभाग ने भटनेर हनुमानगढ़ क्षेत्र से हुडेरो-रतनगढ़ क्षेत्र के बीच आंशिक सर्वेक्षण किया था और इस क्षेत्र में दो दर्जन से अधिक स्थलों से छह हजार से तीन हजार वर्ष पूर्व तक आबादी रहने के प्रमाण इकठ्ठा किये थे। उनकी रिपोर्ट के अनुसार सोत्ति-स्थल छह हजार वर्ष पूर्व गैर-आबाद हुआ। मुण्डा, पीर सुलतान की थेड़, मानक थेड़ी, काली बंगा, पीलीबंगा, बड़ोपल, रंगमहल आदि भी अढ़ाई हजार वर्ष पूर्ण तक आबाद थे किन्तु बीकानेर अंचल के दूसरे भागों के सम्बन्ध में ऐसा कहना कठिन है।

वास्तव में बीकानेर अंचल तीन प्रकार का है। नाळी क्षेत्र सरस्वती दृषद्वती नदियों का बहावक्षेत्र है, जहां लाखों मन काली-पीली मिट्टी जमा हो गई है और जमा हुई मिट्टी से यह क्षेत्र समुद्रतल से सौ मीटर से अधिक ऊंचा हो गया है। फलतः सभ्यता के सारे अवशेष मिट्टी में दब गए हैं। स्वीडिश एक्सपीडिसन की डॉ. हन्नारिड को रंगमहल की खुदाई में चौथे पांचवें धरातल पर दो तीन मिट्टी की सीलें मिली थीं, जिन पर गुप्तलिपि में त्रुटित लेख है। डॉ. एल.पी. टेसीटोरी ने मुण्डा से एक मूर्ति का पादासन खोजा था। उस पर 'यशोदा' लिखा हुआ था। एक अन्य सील पर ''कुमारा-मात्याधिकरणस्य'' है। यह किसी राजकुमार के निजी सचिव की मोहर है, किन्तु शिलालेख के नाम पर भटनेर का फारसी-लेख की पहला महत्वपूर्ण ऐतिहासिक शिलालेख कहा जा सकता है जो हिजरी सन् 1017 का है। उसके हासिये पर किसी ने देवनागरी में 'सं. 1665 चेत सुद 5' लिख दिया है, जिससे यह कुँवर दलपतसिंह की भटनेर से बेदखली का ऐतिहासिक लेख सिद्ध होता है। लेख की इबारत में भी यही बात लिखी है।

नोहर-ददरेवो, पल्लू, हुडेरो आदि में भी दसवीं सदी से पूर्व का कोई लेख नहीं मिला है। नोहर में नाथमठ का लेख, जिसमें अमरनाथ जी का नाम लिखा है, नाथों का अब तक मिला एकमात्र पुराना लेख है। यह सं. 1103 का है। ददरेवो लेख सं. 1273 का है और वह मण्डलेश्वर गोपाल पुत्र जयतसिंह राणा का उल्लेख करता है, जो गोगा चौहान के वंश का होने से महत्वपूर्ण है। हुडेरो लेख संवत् 1309 का है, जो राठौड़ नरहरदास के रूप में यहां राठौड़ों की पहुंच की सूचना देता है। पल्लू का लेख दसवीं सदी का है किन्तु उसमें किसी का नाम पढ़ पाना कठिन है।

बीकानेर अंचल का दूसरा हिस्सा पठारी है, जिसे मगरा कहते हैं। यहां पिलाप और कोलायत मीठे पानी के दो सरोवर होने से आबादी तो रही किन्तु बींयाबान जंगल होने से यह प्रदेश अधिकांश में निर्जन ही रहा। फिर भी पूगल–फलौदी होकर मुल्तान, खंभात आदि को जाने वाले दो व्यापारिक मार्ग इस पठार से गुजरते थे और उन मार्गों पर कई गांव और ढाणी बसे हुए थे। उनमें हद्दां और खींदासर में दसवीं सदी के लेख मिले हैं किन्तु किसी राजवंश का उल्लेख करने वाला पहला शिलालेख सं. 1475 में सूत्रधार हापा ने उतीर्ण किया है। उसने जैसलमेर के एक कठोर पत्थर पर महिषासुर मर्दिनी माता की सुन्दर मूर्ति बनाई और उसके पादासन पर उसे श्री घंटालि देवी का नाम देकर लिखा कि यह मूर्ति महाराज श्री केल्हण के लिये बनाई है। केल्हण जैसलमेर के रावल श्री केहर का बड़ा पुत्र था, जिसने पिता की मर्जी के बिना सगाई कर ली। इसलिये उसे जैसलमेर छोड़ना पड़ा और वह बीकमपुर पर कब्जा करके सं. 1475 में पूगल भी काबिज हो गया। अनुश्रुति कहती है –

पूगल बीकमपुर पुणह विम्मणवाह मरोट।
देरावर नै केहरोर केलण इतरा कोट।।

शिलालेख के लिखते समय पूगल पर केलण का पुत्र चाचा कोट पाल था, यह भी लिखा है।

बीकानेर अंचल का तीसरा भाग अर्द्धमरूस्थली इलाका है। इसमें नोखा तहसील, जिसे पुराने समय में जांगल देश कहते थे और चूरू छापर जो पहले 'सव्वील भू' कही जाती थी, के क्षेत्र आते हैं। इस भाग में शिलालेख है। उनकी खोज अधूरी है। दसवीं सदी से ही यहां अनेक लेख मिलते हैं। भासिनों, मूंधड़ों, उदयरामसर, धणेरो, चरलू, सुजानगढ़, भादलो, अरखीसर, कंवलीसर, मोरखाणो, जांगलू आदि दर्जनों स्थानों पर राठौड़ों के आने से पहले के शिलालेख हैं और वे ऐतिहासिक महत्त्व के हैं। उनका पूरा अध्ययन नहीं हुआ है। उदाहरण के लिए मैं एक शिलालेख का विवरण दूं जो नष्ट कर दिया गया। यह शिलालेख बासी बरसिंहसर में बने एक तालाब के किनारे खड़े कीर्तिस्तंभ पर उत्कीर्ण था, जो भाटी और सांखलों के इतिहास का बहुमूल्य दस्तावेज था। संवत् 1381 का यह शिलालेख 35 पंक्तियों में लिखा था और उसे सर्वप्रथम डॉ. एल.पी. टेसीटोरी ने बासी बरसिंहसर जाकर उसकी कई छापें लीं। वह इस शिलालेख को पाकर बहुत खुश हुआ था।

इससे पूर्व डॉ. टेसीटोरी ने 20 दिसम्बर सन् 1917 को कवलीसर में सं. 1338 की देवली देखी थी। उसके बाद अखीसर कुएं का लेख सं. 1340 और बासीबरसिंहसर का सं. 1381 का लेख मिला था। इनसे सांरवलों के इतिहास पर प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत हो गई थी किन्तु डॉ. टेसीटोरी इस शिलालेख को संपादित करने को नहीं रहे।

बीकानेर का इतिहास लिखते समय पं. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के सामने यह लेख प्रस्तुत हुआ और उन्होंने इसे जाकर मौके पर स्वयं देखा भी किन्तु सांखलों का या भाटियों का इतिहास उन्हें नहीं लिखना था, अतः यह लेख उपेक्षित ही बना रहा और सन् 1972 में

'वैचारिकी' में बीकानेर क्षेत्र के अप्रकाशित शिलालेखों के रूप में उसकी पुनः चर्चा हुई किन्तु सम्पूर्ण रूप में चार वर्ष उसे 'वरदा' – पत्रिका ने प्रकाशित किया। यह शिलालेख जैसलमेर के राजा कर्णदेव का जांगलू राजा कुमरसिंह की पुत्री दूलह देवी के विवाह के उपलक्ष्य में बारात ठहरने के स्थान पर बने दूलहदेवीसर का कीर्ति लेख है, जो जैसलमेर पर बताए गए दूसरे आक्रमण की मान्य तिथि को झुठलाता है और वहां पीढ़ीगिरी में भी भारी बदलाव करने का प्रमाण प्रस्तुत करता है। सांखलों के इतिहास का तो यह मानो 'माईलस्टोन' है।

राठौड़ों के शिलालेखों में कोड़मदेसर का संवत् 1516 का शिलालेख बताता है कि राव जोधा की माता कोड़मदे थी, जो यहां दिवंगत हुई। वह नाल के राजपूतों ही लड़की थी, जो जोधा का ननिहाल होने से चित्तौड़ में रणमल्ल के मारे जाने पर जोधा आदि के लिए सुरक्षित गुप्त–स्थान बना था और राव जोधा द्वारा बीका को, सबसे बड़ा कुंवर होने पर भी, युवराज पर न दिए जाने पर वह अपने चाचा कांधल आदि के साथ सूर्यनगरी को छोड़कर यहीं आ बैठा था। इसी प्रकार राजलदेसर में सं. 1581 का दूसरा लेख है, जो राव बीका के बड़े पुत्र राजसी का मृत्युलेख है। वह भी अपने पिता से नाराज होकर आजीवन बीदावतों के पास रहा था। बीदावत का प्राचीनतम लेख सं. 1565 का है, जो गोपालपुरा में है। पड़िहारा में संसारचन्द बीदावत का मृत्युलेख सं. 1586 का है। राठौड़ों के और भी बहुत से लेख हैं, जो अध्ययन करने पर अनेक रहस्यों पर से पर्दा उठाते हैं। सरदारशहर के पास ऊदासर में सं. 1651 का बड़ा लेख है। वहीं पर रामसिंह, महाराज रायसिंह के छोटे भाई का मृत्युलेख सं. 1634 का है। ये दोनों लेख बीकानेर इतिहास की एक लुप्त कड़ी को प्रकट करते हैं। यह शिलालेख भी पिछले दिनों ही पहली बार प्रकाशित किया गया है।

इतिहास को अपनी मनमर्जी से लिखाने के प्रयास हेतु लिखा गया एक बड़ा लेख बीकानेर के जूनागढ़ किले में सूरजपोल में लगा है। 92 पंक्तियों का यह लेख छह फुट नौ इंच लम्बे और दो फुट तीन इंच चौड़े आकार में लगा है, जो अलग–अलग पांच हिस्सों में लिखाया गया है और फिर एक साथ जोड़ दिया गया है। इस लेख में पहली बार राठौड़ों ने अपने को कनौज के राजा जयचंद का वंशज बताया है और वंश की उत्पति आदि नारायण से कही है, जिसमें सम्राट जयचन्द 133वां राजा है। यह ठीक उस नकल पर है, जिसमें सम्राट अकबर ने अपने को बाबर, चंगेजखां का वंशज बताने के अलावा सीधा ''आदम'' से जोड़ा था।

कहने को यह शिलालेख दुर्ग–प्रतोली के निर्माण का लेख है किन्तु इससे सम्बन्धित उसमें केवल अन्तिम ग्यारह पंक्तियां हैं। शिलालेख में शुरू में जैन 'सिम्बल' बना है किन्तु लेखक का नाम नहीं है। फिर भी जूनागढ़ में लिखे इसी तिथि के दो छोटे लेखों में बृहत्गच्छीय श्री क्षमारत्न–शिष्य मुनि जयन्त का नाम है। संभवतः यह प्रशस्ति भी उसी ने लिखी होगी। प्रशस्ति में महाराज रायसिंह की वीरता का भी विवरण है और उसके द्वारा जीती गई लड़ाई आदि का भी।

कैप्टेन पी. डब्लू पाउलेट ने बीकानेर के गजेटियर में बीकानेर के किले का निर्माता

छड़ीदार माहीदास बताया है, जिसके परिवार से वह स्वयं मिला था। हमने अपने सर्वेक्षण के दौरान उस्तों की बारी के बाहर की छत्रियों में सं. 1669 का एक लेख देखा है, जिसमें सूत्रधार का नाम माईदास पुत्र ऊदा लिखा है।

इसी प्रकार बीकानेर के प्रसिद्ध भाण्डासर मंदिर का निर्माणकर्ता सूत्रधार गोदा था, जिसने सं. 1571 में राजाधिराज श्री लूणकरणजी के राज्य में त्रैलोक्य दीपक प्रासाद बनाकर पूरा किया। उसके पुत्र सूत्रधार सादा ने सं. 1572 में साह सासवरण के खेत में एक तालाब बनाया, जो संसोलाव कहा जाता है। इसी प्रकार संवत् 1592 में लिखे चिंतामणि मंदिर के एक लेख में लिखा है कि सं. 1591 में मुगलाधिप कम्मरां पातसाह ने मंदिर का परिकर तोड़ दिया, उसे पुनः बनवाया गया।

ऐसे और भी अनेक लेख हैं, जिन्हें संगृहीत और संपादित करके उनका अध्ययन किया जावे तो वे काफी महत्त्वपूर्ण सिद्ध होंगे।

❑❑❑

झझू ग्राम के कतिपय प्राचीन शिलालेख

● स्व. श्री मूलचन्द 'प्राणेश'

झझू ग्राम पालीवाल जातीय ब्राह्मणों के बारह खेड़ों में से एक प्रमुख खेड़ा है। यह बीकानेर से 32 मील पश्चिम तथा सुप्रसिद्ध तीर्थ श्रीकोलायत से 6 मील दक्षिण में स्थित है। वर्तमान तक ज्ञात शिलालेखों द्वारा तेरहवीं शताब्दी से इस ग्राम के अस्तित्व का पता चलता है। बीकानेर नगर के अस्तित्व में आने से पूर्व यहां झझू ही एक मात्र व्यवसाय का केन्द्र था। पुरजोर उन्नति के समय में इस ग्राम की आबादी चार हजार घरों की बताई जाती है परन्तु वर्तमान में यहां केवल चार सौ घर आबाद हैं। समृद्धि काल में यहां के निवासियों ने कुओं, तालाब, छतरियां, मन्दिर इत्यादि सार्वजनिक संस्थानों का निर्माण कराया था, जो वर्तमान तक इस ग्राम के निवासियों की आर्थिक स्थिति का परिचय देते हैं। यहां पानी बहुत गहरा है, इसलिये पक्का कुआं बनाना आसान कार्य नहीं है फिर भी झझू में इस समय सात दुतीने और एक चौतीना कुल आठ कुएं विद्यमान हैं। इसी प्रकार 25 तलाइयां, 14 मन्दिर एवं 10 छतरियां भी अपनी टूटी-फूटी दशा में अपने निर्माताओं का परिचय दे रही हैं।

सार्वजनिक स्थानों एवं अपने पूर्वजों के स्मारकों पर शिलालेखों का उत्कीर्ण करवाना भारतीय परम्परा रही है। झझू में भी इस प्रकार के शिलालेखों की बहुतायत है। यह सामग्री तत्कालीन स्थिति का अच्छा परिचय देने वाली है, परन्तु वर्तमान तक अप्रकाशित रहने से सुधीजन लाभ नहीं उठा सके हैं, अतः अनुसन्धित्सुओं के लाभार्थ कुछ चुने हुए शिलालेख यहां प्रस्तुत किये जा रहे हैं। आशा है इस प्रयत्न से ऐतिहासिक, धार्मिक एवं सामाजिक कुछ नवीन तथ्य सामने आएंगें।

शिलालेख संख्या – 1

यह शिलालेख गांव से उत्तर की ओर स्थित रिखोळाई नामक तलाई के आगोर, (पानी आने का स्थान) में लाल रंग के प्रस्तर खण्ड (6 फुट लंबा तथा 1½ फुट चौड़ा) पर उत्कीर्ण है। लेख के ऊपरी भाग में घुड़सवार, अप्सरा तथा घोड़े के पारकोन चे में कोई उत्कीर्ण है।

(1) संवत् 1270 जेठ सुदि 7

(2) खोदाई रीसोला।।

शिलालेख संख्या – 2

(यह शिलालेख गांव से उत्तर की ओर स्थित रामोळाई नामक तलाई के पीछे एक

ढंढी (छोटी तलाई) में सती की देवली पर उत्कीर्ण है। यह ढंढी वर्तमान में मारू कुम्हारों की श्मशान भूमि है। देवली का पत्थर खराब होने से लेख पूरा नहीं पढ़ा जाता।

(1) ।। श्री रामार्पणमे।।

(2) ।। संवत् 1342 वर्षे

(3) ।। मिती पोष वदि 6 ह

(4) ।। श्री ।।

शिलालेख संख्या – 3

(यह शिलालेख गांव से उत्तर की ओर स्थित लाखोलाई नामक तलाई की पाल पर स्थापित एक सती की देवली पर उत्कीर्ण है।)

(1) ।। छ।। संवत पन 1541 वर्षे आसाढ़ व

(2) दि 3 कृष्ण पक्षे छनि वा (स) रे राठउड़

(3) राइपाल सुषा सुत दिवंगता सति सं

(4) देवगता बाई लाषू बाई षिवनी सह।।

शिलालेख संख्या – 4

यह शिलालेख गांव के चौक में स्थित श्री रघुनाथ जी के मन्दिर के गोवर्धन (कीर्ति स्तम्भ) पर उत्कीर्ण है।)

(1) संवत 1681 वर्षेः बैसाक मासे सु

(2) कल पछै 6 दिनै गुरु वासरैः मुद

(3) गिलस्य गोत्रोत्पन्नः ब्राः लाषणः दे

(4) दाणीः ब्राः रामदास तारादासोंणीः ब्राः

(5) पुनमा डयांणीः ब्राः गोपाल डाहोंणीः गो

(6) वर्धन उधरताः मु X X X X :

(7) क्लयाण मस्तु।। छ।। छ।।

शिलालेख संख्या 5

(यह शिलालेख ग्राम से पश्चिम की ओर स्थित टोळाई नामक तलाई के गोवर्धन पर उत्कीर्ण है।)

(1) श्रीरस्तु। श्री गणेशायनमः श्री रामाय नमः।।

(2) संवत 1682 वर्षे ब्राः पुत्रः भाडवांणीः ब्राः गो

(3) पालः डाहांणीः ब्राः धुडसो गोगा मग

(4) राजोंणीः ब्राः हरू हेमराजोंणोः जावंत उ

(5) धरता। वैसाष सुदि 13 मंगलवार। मु X X

(6) घत। कल्याणमस्तु। श्री। ।छ। ।छ।।

(7) खरच आधो पुनेरो आधे डेहाणारो लागंति।

शिलालेख संख्या 6

यह शिलालेख गांव से उत्तर की ओर स्थित रिखोलाई नामक तळाई के आगोर में सती की देवली पर उत्कीर्ण है।

(1) स्वस्ति श्री षेमजी सा संवत

(2) 1683 वरष जेठ सुदि 10 (?)

(3) सोमवार सती हुई आदतः

(4) महासतीः लाछां देवलोक प्राप्तः

शिलालेख संख्या – 7

(उपर्युक्त शिलालेख के समीपवर्ती सती की देवली पर उत्कीर्ण।)

(1) ।। रामं।। श्री गणेशायनमः।। संवत 1765

(2) ।। वर्ष महामंगलप्रद मासोतम मासे।।

(3) फाल्गुणमासे।। शुक्ल पक्षे। एकादशीये

(4) ।। दिने। साए शिरमौर।। साहजी श्री। रतनसींजी।

(5) ।। तत पुत्र माणक सिंघजी दिवंगत। तस्य

(6) ।। भार्या 1761 वैसाक वदि 6 दिने माल्हु

(7) ।। साहजी श्री खींवसींजी तत पुत्री दीपां

(8) ।। देवगतं स्वर्ग प्राप्ति। तस्य देवली जात।

(9) ।। इति। श्री।

शिलालेख संख्या – 8

(यह शिलालेख सांवलेजी के मंदिर से उत्तर की ओर स्थित छतरी में प्राप्त देवली पर उत्कीर्ण है)

(1) संवत 1760 वष जेठ सुदि 12

(2) सोम वासरे नक्षत्र स्वाति सु

(3) भदिने वहदा तस्य घरणो दे

(4) वल उधरत वहदा देव लोके गतः।।

शिलालेख सं. 9

(यह शिलालेख झझू से 6 मील दक्षिण स्थित स्व. श्री सुखदेवराम चौधरी के खेत की सुरह पर उत्कीर्ण है।)

(1) श्री महाराजा सुजाणसिंहाधिराज सं. 1766 वरखे मिति असाड़ बदि 6
(2) वार सोमवार ब्रा. रामसुत परमाणंद, डाहा जात पुनंध ने खेत 1
(3) खीखरनरी सींवरो नरसिंघदास टेहलेरो खेत हुंतो तिको ब्रा. राम नै
(4) धर्मादे खाते डोहली दीनी अजबसिंघ पिता रायसिंग नरसिंगदासोत
(5) नाथोतों रो खेत तलाकियोड़ो। डोहलीरो कोई नांव लेवण पावं नहीं डोहली
(6) री सुरई भाने, दीने, दासु, नाथे, रते खोदाई छं।।

शिलालेख सं. 10

(यह लेख गांव से पूर्व की ओर स्थित रामदासरी नामक तलाई के गोवर्द्धन पर उत्कीर्ण है)

(1) समत।।17।।51।।वरषे।।शाके।।1616 प्रवर्तमाने। वंशाक सुदि।।
(2) 6। वार सुक्र। ठा। गोविंद्यराम। रामदास। सुत।। रतना।
(3) उद्यापन तत्र उधारण। श्रीर (?) गर उपर पीपल 2।। उद्यापन
(4) ठव।। उधा (र) ण। अध्यमुपन देसण। जजु गां X X X
(5) श्री रीड X म गण प्रोत।। श्री रामजी सीता सीता
(6) गाम झझु सुषुने।। श्री मती राजो उनोपसींघजीरे।।

❑❑❑

चूरू में छतरी निर्माण की परम्परा – पूर्वजों के प्रति कलात्मक श्रद्धा–सुमन

● डॉ. मुकेश हर्ष

किसी भी मृत व्यक्ति की यादों को स्थायी बनाये रखने के लिये उसकी याद में कोई स्मारक खड़ा करने की प्रथा काफी प्राचीन है। चूरू में भी कई प्रकार के स्मारक जैसे–छतरी, देवली, चबूतरा, चरण पादुका आदि विभिन्न रूपों में मिलते हैं जिनमें से कईयों पर लेख हैं तो कईयों पर नहीं भी है। चूरू में बनी छतरियाँ प्रायः दो प्रकार की हैं : एक छोटी और इकहरी छतरियाँ जो प्रायः स्तम्भों पर खड़ी की गई हैं और सार्वजनिक या निजी शमशान घाट में बनी हैं तथा दूसरी विशालकाय छतरियाँ जो नगर के अलग–अलग स्थानों में सम्पन्न नागरिकों द्वारा बनवाई गई हैं और इन छतरियों से संबद्ध शिवालय, धर्मशाला, कुआं या कुण्ड आदि का भी निर्माण करवाया गया है।

स्थापत्य एवं चित्रकला की दृष्टि से चूरू की छतरियों का विशेष महत्व है। जिस व्यक्ति के निधन पर छतरी बनाई जाती थी उसके दाह संस्कार के स्थान पर कभी–कभी शिवालय बनाकर उसके ऊपर दो मंजिली बड़ी छतरी का निर्माण करवाया जाता था और छतरी का मुख्य गुम्बद शिवालय के ऊपर बनवाया जाता था। इसी गुम्बद में उपयुक्त स्थान पर लाल रंग का प्लस्तर कर लोहे की कलम से छतरी के निर्माण का उद्देश्य, निर्माण का समय, निर्माता का नाम एवं उस वक्त के वस्तुओं, सोना–चाँदी के भाव उत्कीर्ण करवाये जाने की प्रथा थी। ऐसे भित्ति लेख कुछ छतरियों में मिलते हैं, कुछ में नहीं है। चूरू में विशाल छतरियाँ सात हैं, इसके अलावा 8 व 12 खंभों वाली तथा इकहरी छतरियाँ बड़ी संख्या में हैं।

चूरू के पावटा कुआं (वर्तमान सब्जी मंडी के पास) से कुछ उत्तर की ओर हटकर नगर का पुराना शमशान घाट था, जहाँ पर कुछ वर्षों पूर्व तक कई छतरियाँ खड़ी थी, लेकिन आज उनका नामो–निशान भी शेष नहीं रहा है। इन छतरियों में लाल पत्थर से निर्मित दो कलात्मक छतरियाँ भी थीं जिनकी शिलाओं पर नृत्य–संगीत संबंधी दृश्य उत्कीर्ण थे। विविध वाद्ययंत्रों के साथ कई प्रतिमायें उत्कीर्ण की गई थीं, अनेक प्रकार के सुन्दर बेल–बूटे बनाये गये थे। ये छतरियाँ चूरू के ठाकुरों की बतलाई जाती थी, लेकिन अब उनका कोई चिन्ह शेष नहीं है[1]।

चूरू की छतरियाँ :–

भगवानदास बागला (माहेश्वरी) के डंडे (शमशान स्थल) की छतरियाँ –

चूरू के उत्तरी–पश्चिमी भाग में हिन्दुओं का सार्वजनिक शमशान–घाट है। पहले यहाँ खुले स्थान में ही शवों का दाह–संस्कार किया जाता था जिसके लिए राज्य ने 7 बीघा, 7 बिसवा जमीन का पट्टा पूर्व बीकानेर राज्य की ओर से पोह बदि 13, संवत् 1651, ई. 1594 को

बना दिया गया था, लेकिन बाद में चूरू के राय बहादुर सेठ भगवानदास बागला ने इस स्थान के चारों ओर मजबूत दीवार व द्वार आदि बनवा दिये। तभी से यह शमशान घाट भगवान दास बागला के डंडे के नाम से जाना जाता है। इस डंडे में अनेक पुरानी व नई स्मारक, छतरियाँ व चबूतरे बने हुए हैं। कई छतरियों में स्मारक लेख भी अंकित किये गये हैं। भगवान दास बागला के डंडे की प्रमुख व महत्वपूर्ण छतरियों का विवरण अग्रांकित है :-

1. **रामरिखदास भावसिंह का बेटा जुहारमलजी की छतरी :-**
   वि.सं. - 1960
   ई. - 1903
   शक संवत-1825

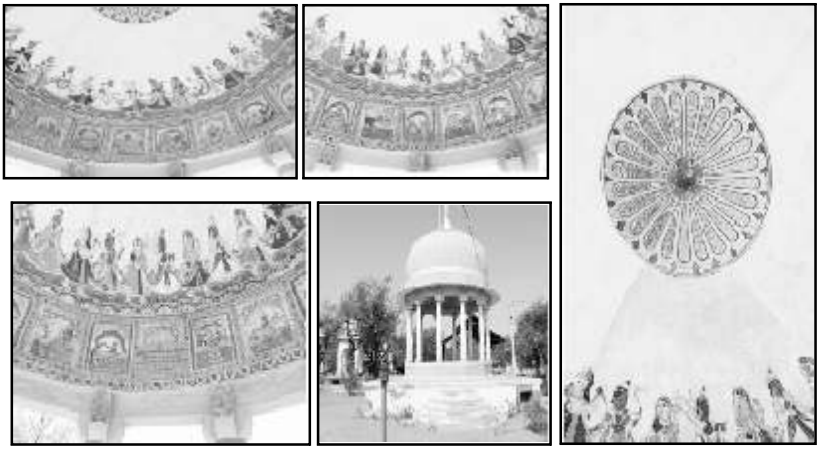

यह छतरी चूरू के उत्तरी-पश्चिमी भाग में भगवानदास बागला के डंडे के मध्य में स्थित है। इन छतरियों में से एक विशालतम छतरी है, जिसकी पश्चिमी भित्ति पर एक लेख लगा हुआ है। भित्ति लेख के अनुसार[2]-रामरिखदास भावसिंह का बेटा जुहारमलजी का मिती माघ बदी 15 संवत् 1960 का। गुड़ 8.25 सेर, तेल 3.50, बाजरी-19, गेहूं 14, मोठ-21, घिरत (घृत) 1.25, टका 30, चारो 1.50 (मण), पालो-2 मण, 5 सेर, ईसवी ता. 17 जनवरी 1904।

यह छतरी 3 फुट 6 ईंच ऊँचे व 26 फुट 3 ईंच लम्बाई-चौड़ाई की वेदिका पर निर्मित है। चत्वर पर 12 कोण हैं। प्रत्येक कोण 4 फुट 6 इंच है। छतरी में 12 स्तम्भ हैं। प्रत्येक स्तम्भ की लम्बाई 7 फुट, 9 इंच है। स्तम्भ पर कम अलंकरण है। वेदिका व चत्वर पर पान के पत्तो की डिजाइन है। चारमुखी टोडी या शालभंजिका अलंकृत है। उष्णीश पर भी फूल-पत्तियों की डिजाइन बनी है। छज्जे के बाद सादा ड्रम है। फिर एक वलयाकृति के बाद कमल की पत्तियों की डिजाइन है। गुम्बद के ऊपर एक उल्टा कमल है। उस पर एक शंकु, एक

वलय, एक कमल, एक वलय, फिर गुमटी है। छतरी लाल पत्थर से निर्मित है जिसे वर्तमान में सफेद व आसमानी रंग से रंग दिया गया है। छतरी के गुम्बद में (फ्रेस्को बुनो) आलागीला शैली में पेण्टिंग की गई है, जो बहुत सुन्दर है। चित्रों में नीले, हरे, पीले व भूरे इत्यादि रंगों का प्रयोग किया गया है। छतरी के गुम्बद में कृष्ण-राधा की रासलीला के 34 चित्र हैं जिन सबके पास अलग-अलग किस्म के वाद्य यंत्र हैं। इनके नीचे 24 अवतारों के चित्र चटकीले रंगों में बनाये गये हैं। देव-अवतारों के चित्रों में प्रमुख है :- कालिया नाग कथा, मत्स्यावतार, शेष शय्या पर विष्णु भगवान, लक्ष्मीजी पैर दबाते हुए व नाभि से निकले कमल-पुष्प में ब्रह्माजी। गरुड़ अवतार, बलरामजी व कृष्ण भगवान, राम-सीता व हनुमान भगवान, सुदामा-कृष्ण मिलन, गजेन्द्र-मोक्ष कथा, गौचारण करते हुए कृष्ण भगवान, नृसिंह अवतार, गजोख-अवतार इत्यादि[3]।

2. सर्वसुख जी अग्रवाल की छतरी :-

वि.सं. - 1865

ई. - 1808

शक संवत-1730

यह छतरी भी भगवानदास बागला के डंडे में स्थित है। यह छतरी जुहारमलजी की छतरी के दांयी ओर स्थित है। छतरी में पश्चिमी दिशा में लाल रंग का प्लस्तर पोतकर कलम से लेख लिखा हुआ है। भित्ति लेख के अनुसार[4]-श्री गणेशाय नमः। संवत् 1863 का मासोत्ममासे द्वितीय श्रावण मासे तिथ्यों पंचभ्या दिने श्रेष्ठ बासरे सर्वसुखजी बैकुण्ठ धाम प्राप्तम। संवत 1865 का मास श्रेष्ठी मासे कार्तिक मासे शुक्ल पक्षे तिथ्यों द्वितीया भृगुवासरे अठखंभो पुज सर्वसुखजी ऊपर बण्यो। महाजन अग्रवाल सिंघल गोत्र केसाण भागीरथजी तस्य पुत्र सर्वसुखजी तस्य पुत्र सेवाराम सिरदारमल (नाती) महानन्द तीना करवायो। राज श्री शिवजी सिंघजी, छत्री करी फाजलखाँ, भतीज जुमो। भाव रघोती-गीहूँ 27 सेर, बाजरो 1 मण 1 सेर, मोठ 37 सेर, घी 5.75, तेल 8.1, गुड 23 सेर, टका 16.25। दसकत वैद्य बद्रीदासजी तस्य अनुज मुकन्ददास का, बांचै जिसकूं जै श्री राम। दोहा-

जग बाधा साधा करो बुधि जन वाक अमोल।
जग फीको नीको नहीं यही वेद के बोल।।
ओम नमो भगवते वासुदेवाय।।2।।

छतरी का चत्वर अष्टकोणीय है। चत्वर (चबूतरे) की ऊँचाई 1 फुट 8 इंच है। चत्वर की चौड़ाई 5 फुट 2 इंच (एक कोण की पैमाइश) है। छतरी में आठ खंभे व 16 कोण हैं। प्रत्येक स्तम्भ की लम्बाई 5 फुट 3 इंच है। स्तम्भ का आधार अलंकृत है। फिर एक वलय है। कमल पुष्प की आकृति व पुंकेसरनुमा डिजाइन बनी है। फिर उल्टा कमल, वलय, उसके पश्चात सीधा कमल है। यह डिजाइन कम स्तम्भों पर प्राप्त होती है। शंकुदार महराब, छज्जा, ड्रम व गुम्बद अलंकृत है। छतरी के अंदर चूने पर लाल, हरे रंगो से फूल-पत्तियों का चित्रांकन किया गया है। यह छतरी भी लाल पत्थर से निर्मित है। वर्तमान में इसे भी मरम्मत करके बाहर सफेद प्लास्टर कर दिया है।

3. भागीरथदासजी की छतरी :-
वि.सं. - 1852 ई. 1795
शक संवत-1717

यह छतरी भी भगवानदास बागला के डंडे में जुहारमलजी की छतरी के बांयी ओर स्थित है। छतरी में लाल रंग के प्लस्तर पर लेख लिखा हुआ है। लेख के अनुसार-श्री रामजी सदा सहाय छै। श्री गोपीनाथ सदा सहाय छै। श्री गणेशजी सदा सहाय छै। श्री रामजी समत 1852 मिती फागण बदी 5 वार बिस्पतवार छत्री पुज री भागीरथदासजी पर कराई भावसिंध, सरबसुख, किसनदास, चैनीराम, सवाईराम रुपिया 75 चौंतरे बीना लागा दै। राज श्री स्योजीसिंधजी के राज माहा। रजुः जुमः राज अलबकस राज के बेटै करी। दसकत सरदासमल सरबसुखजी के बेटै का छै, बांचे जण नै राम राम छै। बाजरो मण 2.25, घिरत सेर 7.45, गुड 22 सेर, सकर 20 सेर, हुंडी रोकड़ी दर 2.75, बदता, टका 201। श्री रामजी सदा सहाय करसी राम राम[5]।

लगभग 4 फुट ऊँची वेदिका पर 2 फुट के चत्वर पर छतरी का निर्माण किया गया है।

चूने व पत्थर से निर्मित 4 मोटे वर्गाकार स्तम्भ हैं। शंकुदार महराब है। छज्जा, ड्रम व गुम्बद अलंकृत है। गुम्बद के ऊपर गुमटी बनी हुई है। छतरी के गुम्बद के मध्य भाग में फूल-पत्तियों का चित्रांकन किया गया है। सार-संभाल के चलते, इस छतरी को सफेद पुटी से प्लस्तर कर दिया गया है।

4. भगवानदास बागला के डंडे की छतरी[6] :-

यह छतरी श्री भगवानदास बागला के डंडे में हैं। यद्यपि यह प्राचीन छतरी है। इसमें कोई शिलालेख प्राप्त नहीं हुआ है। इस छतरी में लाल पत्थर से निर्मित आठ बड़े स्तम्भ हैं। वेदिका का नव-निर्माण किया गया है। चत्वर पर पान के पत्तो की डिजाइन बनी है। छज्जे के बाद कम अलंकृत गुम्बद हैं। गुम्बद के ऊपर उल्टा कमल है। कमल के ऊपर एक वलय, एक कमल, फिर दो वलय व शंकु से गुमटी का निर्माण किया गया है। शंकुदार महराब है। लाल पत्थर से निर्मित इस छतरी को सफेद पुट्टी व अन्य रंगों से पोत दिया गया है।

5. सरुपचंदजी की छतरी :-

वि.सं. - 1869

ई. - 1812

शक संवत-1734

यह छतरी भी भगवानदासजी बागला के डंडे में स्थित है। यह छतरी भागीरथदासजी की छतरी के दांयें स्थित है। छतरी के पश्चिमी दीवार पर लाल प्लस्तर पर एक लेख खुदा हुआ है। भित्ति लेख के अनुसार-संवत् 1854 का शाके 1719 मासानामासोत्मासे पोह मासे शुक्ल पक्षे तिथ्यो 6 अमुकवासरे सरुपचंदजी बैकुण्ठ धाम पधारया, तत्पुत्र ज्येष्ठ वृन्दावनजी लधू पुत्र हुलासीरामजी दोनूं भायां मिल छत्री कराई। संवत् 1869 का पूज्य सरुपचंदजी ऊपर मिती पोह सुदी 7, भृगुवारे लागत का रुपिया-125, उनमान लाग्या, ठाकुर शिवजी सिंघजी के राज मांही, चिणी चेजगारा फाजल, राजू, भादर। 2 धोती, टका 17125, हुण्डी 3.25, बाजरो

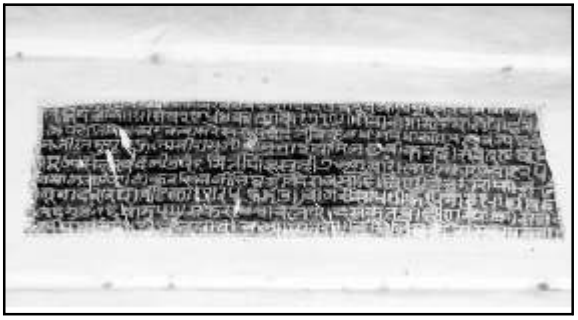

सेर 15, गीऊं 15, मोठ 15.50, घी-6, तेल-6, गुड़-16, खांड-5.50, सक्कर-14, चावल-12, दसकत ब्राह्मण स्योकिसन का राम राम[7]।

यह छतरी लगभग 3 फुट 2 इंच ऊँची वेदिका पर निर्मित है। इसका चत्वर लगभग 6 फुट 8 ईंच है। छतरी की वेदिका व चत्वर वर्गाकार हैं। छतरी में 4 स्तम्भ हैं। प्रत्येक स्तम्भ लगभग 5 फुट लम्बा है। छतरी अष्टकोणीय है। स्तम्भ में बुनियादी माठे पर फूल-पत्ती अलंकृत है। फिर तिहरी वलय है। फिर कमलनुमा आकृति में से पुंकेसरनुमा डिजाइन निकली हुई है एवं उल्टा कमल है। एक वलय व कमल-पुष्प की बड़ी पत्तियों की डिजाइन है। शंकुदार महराब, छज्जा है जो कि बंगाली शैली का प्रतीक है। गुम्बद पर कमलाकृति बनी हुई है। गुमटी के आधार पर उल्टा कमल है। गुमटी क्षतिग्रस्त हो गई है। लाल पत्थर व चूने से निर्मित इस छतरी को सफेद पुट्टी से मरम्मत कर दिया गया है[8]।

6. मोतीरामजी सांखू की छतरी :-

वि.सं. - 1852

ई. - 1795

शक संवत-1717

यह छतरी जुहारमलजी की छतरी के बांयी ओर भगवानदासजी बागला के डंडे में स्थित है। छतरी में पश्चिमी भित्ति पर लाल प्लस्तर पर पीली या सोने की कलम से लेख लिखा हुआ है।

भित्ति लेख के अनुसार–श्री लिछमीनाथजी, श्री रामजी सहाय छै, श्री गोपीनाथजी सहाय छै। समत–1852 मिती मिगसर बदी 2, वार सनीवार, छत्री कराई मोतीरामजी सांखू वाले ऊपर गुमानीराम, देवीदत्त, नोपतराय, जीवणराम, शिवराम कराई, राज शिवजीसिंहघजी[9] के राज माहीं कराई रिपिया 111 लागत का लाग्या। दसकत जीवणराम का[10]।

यह छतरी लगभग 4 फुट ऊँची वेदिका और लगभग 2 फुट ऊँचे चत्वर पर निर्मित है। छतरी में चार वर्गाकार स्तम्भ हैं। प्रत्येक स्तम्भ लगभग 5 फुट का है। छतरी में अष्टकोण है। कम अलंकृत उष्णीश व ड्रम है। गुम्बद के आधार पर कमल की डिजाइन है। शेष गुम्बद सादा है। गुमटी क्षतिग्रस्त है। छतरी के अंदर व बाहर सफेद पुट्टी करके मरम्मत कर दी गई है। जिससे चित्रांकन का पता नहीं चलता। छतरी लाल पत्थर व चूने से निर्मित है[11]।

7. रामजी की छतरी :–

वि.सं. – 1800

ई. – 1743

शक संवत–1665

यह छतरी भी भगवानदासजी बागला के डंडे में जुहारमलजी की छतरी के बांयी ओर स्थित है। छतरी में पश्चिमी भित्ति पर लाल प्लस्तर में लेख लिखा हुआ है। भित्ति लेख के अनुसार–श्री लिछमीनाथजी सहाय छ, श्रीगणेशजी सहाय छ, श्री दयालजी सहाय छ। समत 1800 मिती सुदी 2 बार (सीता) रामजी ऊपर छत्री कराई राज श्री सिवसिंघजी को माह हरकण्ठराय तुगनराम कराई, रिपिया 111 लागा[12]।

छतरी का आकार–नाप व डिजाइन मोतीरामजी सांखू की छतरी के समान है।

8. जुगलकिशोरजी की छतरी :–

वि.सं. – 1853

ई. – 1796

शक संवत–1718

यह छतरी भगवानदासजी बागला के डंडे में रामजी की छतरी के पास स्थित है। छतरी के पश्चिमी भित्ति में लाल प्लस्तर पर लेख लिखा हुआ है। लेख के अनुसार[13]– श्री

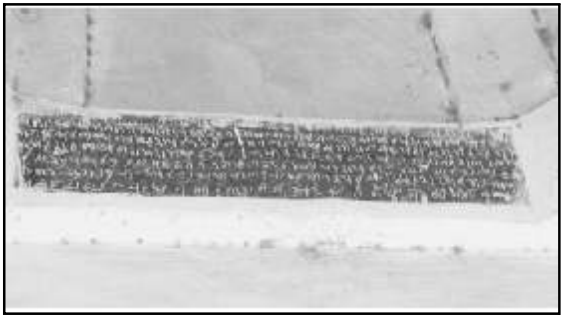

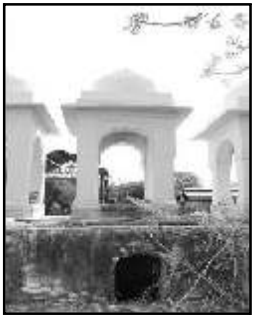

रामजी सहाय छ, श्रीगणेशाय नमः, श्री दादूदयाल सदा सहाय छ। श्री सुरज महाराज जी समत 1853 मिती मिगसर बदी 13, बार अदीतवार छत्री पुजजी श्री जुगल किशोरजी ऊपर कराई छ, फकीरचंद राज श्री सिवजी सिंघजी के माही रिपिया 125, जिन मायने चुकती लागा छ। चिणी राज (चंद पर = चांदो पीरू) चूरू मांही छ। छतरी मा रहे जिसने राम राम छ। दसकत केसै फकीरचंद के बेटे का छै। बाजरी 2 मण 11 सेर, मोठ 2 मण 15 सेर, घी 7, गुड 22 सेर, सकर 17 सेर, खांड रिपिया–7, गट रिपिया 11, चुहारा रिपिया 4.25, गीहूं 1 मण 5 सेर[14]। इस छतरी का आकार–नाप मोतीरामजी सांखू, रामजी की छतरी के समान है। 4 मोटे स्तम्भों पर छतरी टिकी है। वेदिका में छोटा कक्षनुमा स्थान बना है। लाल पत्थर व चूने से निर्मित इस छतरी को भी सफेद पुट्टी से मरम्मत कर दिया गया है।

9. गूजरमल सरावगी की छतरी :–

वि.सं. – 1839

ई. – 1782

शक संवत–1704

यह छतरी भगवानदासजी बागला के डंडे में जुगलकिशोरजी की छतरी के पास स्थित है। छतरी में पश्चिमी भित्ति पर लाल प्लस्तर पर लेख लिखा है–श्री भगवत लाम देवी, समत 1839 बरषे मिती फागण बदी 3 वार सोमवार.....छतरी गूजरमल सरावगी ऊपर पूरणमल

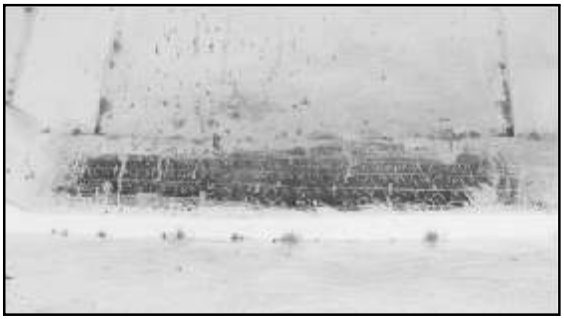

कराई। राज श्री हरीसिंघजी राठौड़ को तपै, दसकत पूरणमल का श्री राम-राम.....लाभ देसी मीती फागण बदी (2) वार सोमवार[15]।

यह छतरी 3 फुट 9 इंच वेदिका व लगभग 2 फुट ऊँचे चत्वर पर निर्मित है। छतरी में 5 फुट के 4 स्तम्भ है। छतरी अंदर से अष्टकोणीय है। छतरी के चत्वर पर पेण्टिंग है। वर्गाकार स्तम्भ, शंकुदार महराब, छज्जा, अनअलंकृत ड्रम, गुम्बद व ऊपर टूटी हुई गुमटी है। लाल पत्थर-चूने से निर्मित इस छतरी को भी सफेद पुट्टी से मरम्मत कर दी गई है।

10. देवेन्द्र कीर्तिजी की छतरी :-

वि.सं. - 1797

ई. - 1740

शक संवत-1662

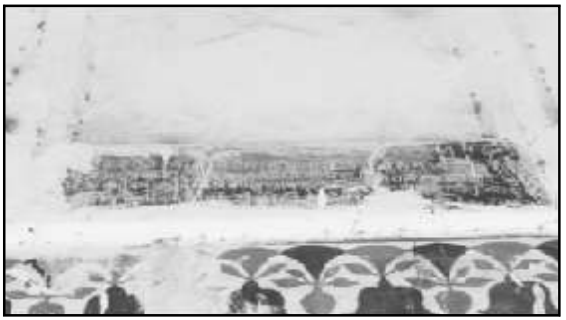

यह छतरी भगवानदासजी बागला के डंडे में गूजरमलजी की छतरी के पास स्थित है। छतरी की पश्चिमी भित्ति में लाल प्लस्तर पर लेख लिखा है[16]। संवत् 1797 वर्षे चैत्र सुदी 10. .....अदितवार राज श्री संगमराम सिंघजी के गांव चूरू मध्ये छत्री श्री.....श्री श्री देवेन्द्र कीर्ति का शिष्य हरनारायण पांडे का दसकत।[17]

छतरी का नाप व आकार में जुगलजी, गूजरमलजी की छतरी के समान है। अष्टकोणीय छतरी में फूल-पत्तों की डिजाइन बनी है। फूल-पत्तों की डिजाइन शंकुदार महराब के अंदर तक बनी है जिसमें लाल, हरे रंगों का अधिकता से प्रयोग किया गया है।

11. केशोरायजी की छतरी :-

वि.सं. - 1856

ई. - 1799

शक संवत-1721

यह छतरी बागलाजी के डंडे में देवेन्द्र कीर्तिजी की छतरी के पास स्थित है। छतरी की पश्चिमी भित्ति पर लाल प्लस्तर पर लेख लिखा हुआ है[18]। केशोरायजी बैकुण्ठ धाम प्राप्तम संवत् 1856....भाद्र मासे कृष्ण पक्षे तिथ्यों अमावस्या श्रेष्ठ मासे छत्री पूज्य केशोरायजी महाजन

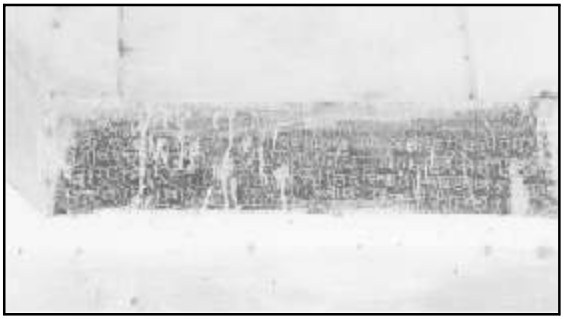

अग्रवाल गर गोती के लोइया रामकिसन दासजी तस्य पुत्र केशोरायजी ऊपर बणी। पुत्र जीवणराम ने छत्री कराई, राज श्री शिवसिंघजी शुभ स्थाने अछितकारी छत्री राज भादर करी। बाजरी मण 1.5, मोठ सेर 57.....।

चार स्तम्भों वाली छतरी के स्तम्भ वर्गाकार हैं। शंकुदार महराब, छज्जे के बाद कम अलंकृत ड्रम हैं। सादे गुम्बद के ऊपर क्षतिग्रस्त गुमटी है। लाल पत्थर से निर्मित इस छतरी को भी सफेद पुट्टी से मरम्मत कर दी गई है।

12. जीवणरामजी अग्रवाल की छतरी :–

वि.सं. – 1891

ई. – 1834

शक संवत–1756

यह छतरी बागलाजी के डंडे में केशोरायजी की छतरी के पास स्थित है। छतरी में लाल प्लस्तर पर लेख लिखा है। भित्ति लेख के अनुसार[19]–श्री गणेशाय नमः, संवत् 1882 शाके 1747 मासानामासोतं.....जेष्ठ मासे कृष्ण पक्षे तिथ्यो 12 द्वादशायां भृगुवासरे ता दिने साहजी जीवणरामजी बैकुंठ धाम प्राप्तम्। समत 1891 मिती पोह बदी 10 दसम्याया गुरुवार के दिन छत्री साहजी केशोरायजी तत्पुत्र जीवणरामजी ऊपर बणी छै। महाराजाजी री रतनसिंघजी के राज मांही, नगर चूरू मध्ये अग्रवाल गर गोती लोइया जीवणरामजी ऊपर छत्री बणी छै

लागत रुपया 125 छै दसकत व्यास घेरुलाल का छै। बंचै जींनै राम राम छै। बाजरी मण 2.50, मोठ मण 2, घिरत सेर 3.75, गुड सेर 24, सकर सेर 22। छतरी का आकार-प्रकार व माप केशोरायजी की छतरी की तरह ही है।

13. श्यामलालजी पारीक की छतरी :-

वि.सं. - 1994

ई. - 1937

शक संवत-1859

यह छतरी बागलाजी के डंडे में जीवणरामजी अग्रवाल की छतरी के पास स्थित है। यह एकमात्र छतरी इस डंडे में है जो कि ब्राह्मण की है। छतरी में लाल प्लस्तर पर लिखे लेख के अनुसार-श्यामलाल पारीक बेटा भानीराम का, मिती चैत्र बदि 2, संवत् 1992 जिस पर छत्री कराई रामकुमार पारीक समत 1994 मिती फागण बदि 8, दसकत गनी चेजारा[20]।

यह छतरी 3.5 फुट ऊँची वेदिका व एक फुट ऊँचे चत्वर पर निर्मित है। छतरी में 5 फुट लम्बे 4 स्तम्भ हैं। छतरी अष्टकोणीय है। शंकुदार महराब, छज्जे, ड्रम के ऊपर कमलाकृति का गुम्बद व क्षतिग्रस्त गुमटी है। पत्थर-चूने से निर्मित इस छतरी की भी सफेद पुट्टी से मरम्मत कर दी गई है।

14. सम्पतरामजी गोयन्का/गोयन्दका की छतरी :-

वि.सं. - 1936

ई. - 1829

शक संवत-1801

यह छतरी बागलाजी के डंडे में श्यामलालजी पारीक की छतरी के पास स्थित है। छतरी में लाल प्लस्तर पर पीले रंग से लेख लिखा है-संवत् 1936 शाके 1801 मिती अष्टम्या गुरुवासरे छत्री श्री संपतरामजी गोयंदके पर कराई। तीनूं भाइयां रामभगतदास, माणकराम, भागचंद सीर मांय। श्री शिवाय नमः[21]।

यह छतरी 4 फुट ऊँची नवनिर्मित वेदिका व एक फुट ऊँचे चत्वर पर निर्मित है। यह

छतरी 4 स्तंभो वाली अष्टकोणीय छतरी है। स्तम्भ के आधार पर कमल की पत्तियां, पुंकेसरनुमा आकृति उत्कीर्ण है। शंकुदार महराब, ड्रम व छज्जे पर कोई अलंकरण नहीं है। गुम्बद कमलाकृति का है। उस पर उल्टा कमल व क्षतिग्रस्त गुमटी है।

15. बक्सीराम कन्दोई की छतरी :–

वि.सं. – 2000

ई. – 1943

शक संवत–1865

यह छतरी बागलाजी के डंडे में संपतरामजी की छतरी के पास स्थित है। छतरी की दीवार पर एक सादा लेख लिखा है–बकसीराम कंदोई की जोड़ायत का स्वर्गवास मिती पोह बदि 8 वार सोमवार संवत् 2000 ऊँ राम[22]।

यह छतरी 4 फुट ऊँची वेदिका व 2 फुट ऊँचे चत्वर पर स्थित है। इसमें 4 स्तम्भ हैं। प्रत्येक स्तम्भ 4 फुट का है। शंकुदार महराब, छज्जा व कमलाकृति का गुम्बद है। गुम्बद के ऊपर तीन वलय व एक शंकु से गुमटी निर्मित है। पत्थर–चूने से निर्मित इस छतरी को सफेद पुट्टी से मरम्मत कर दी गई है। जिस कारण से किसी भी प्रकार की चित्रकारी का पता नहीं चलता।

16. शिवबक्षरायजी, जमनाधरजी जलेबीचोर एवं जयदयाल व दिलसुखराय सिरसले वालों की छतरी :–

बागलाजी के डंडे में क्रमशः बांये से दांये चार छतरियाँ स्थित हैं। छतरियों में उत्कीर्ण लेख के अनुसार–यह छत्री श्रीमान् सेठ गुटीरामजी के सुपुत्र सेठ शिवबक्षरायजी जलेबीचोर की स्मृति में बनाई गई है। जन्म माघ शुक्ला 5 संवत् 1917, स्वर्गवास ज्येष्ठ कृष्णा 6 संवत् 1988[23]। बांये से दांयें क्रमशः दूसरी छत्री लेख के अनुसार–यह छत्री श्रीमान बाबू नाथुरामजी के सुपुत्र बाबू जमनाधरजी जलेबीचोर की स्मृति में बनाई गई है। जन्म मिति चैत्र बदि 6 समत 1916, स्वर्गवास पोह शुक्ला 7, सोमवार, संवत् 1976[24]।

बांये से दांये तीसरी छतरी लेख के अनुसार–जयदयालजी सिरसले वाला, स्वर्गवास आसोज सुदि 14 संवत् 2004[25]। चौथी छतरी लेख के अनुसार–दिलसुखराय सिरसले वाला, स्वर्गवास आसोज बदि 1, संवत् 2007[26]।

पत्थर चूने से निर्मित यह छतरियाँ भी संपतरामजी, बक्सीरामजी की छतरी के समान है। इनको सफेद–पुट्टी से मरम्मत कर दिया गया है। जिसके कारण से इनके स्थापत्य व चित्रकला शैली पर कम प्रकाश पड़ता है।

17. जयनारायण कन्हैयालाल बागला द्वारा निर्मित छतरी :–

वि.सं. – 1945

ई. – 1888

शक संवत–1810

मंत्रियों की छतरी के पास ही उत्तर की ओर जयनारायण कन्हैयालाल बागला की ओर से बनवाई गई बड़ी छतरी है। छतरी की दीवारों पर विभिन्न व्यक्तियों द्वारा समय–समय पर लिखे गये लेख तो अनेक है[27]। लेकिन छतरी के निर्माण का कोई मूल लेख नहीं है। छतरी के पास ही भोलारामजी बागला द्वारा बनवाया गया राधाकृष्ण का मंदिर एवं उसके सामने संवत् 1837 में उदयरामजी बागला द्वारा बनवाया गया कुआं है जिसके निर्माण का कीर्ति स्तम्भ कुएँ की बाड़ी में लगा है।

कुएँ से कुछ ही दूर इसी गोशाला मार्ग पर कन्हैयालालजी बागला द्वारा निर्मित बड़ी बगीची है, जिसके पिछवाड़े बड़ा कुण्ड व पायतण है। अनेक भित्ति चित्र भी हैं। यह बगीची 'खाकीजी की बगीची' के नाम से भी जानी जाती है। संभवतः खाकीजी कोई महात्मा थे जो यहाँ रहे होंगे। बगीची में सेठ जयनारायण बागला पर एक शिवालय का निर्माण करवाया गया, जिसका लेख इस प्रकार है–श्री गणेशाय नमः सेठ जी जयनारायणजी बागलै ऊपर बुंगली कराई मिति मंगसिर बदी 15, वार सोमवार, समत् 1945, लालाजी कन्हैयालालजी कराई। कारीगर नबु, जीवण चैजारा करी दसकत रुगनाथ ब्राह्मण। बाजरो 16 सेर, मोठ 18 सेर, गीहूँ 14 सेर, घिरत 1 सेर 5.50 छटांक, गुड 10 सेर, सकर 7 सेर, खांड 3.25 सेर, तेल 3.50 सेर, चावल 8 सेर। राजाजी श्री 108 गंगासिंहजी के बखत मांय बणी[28]।

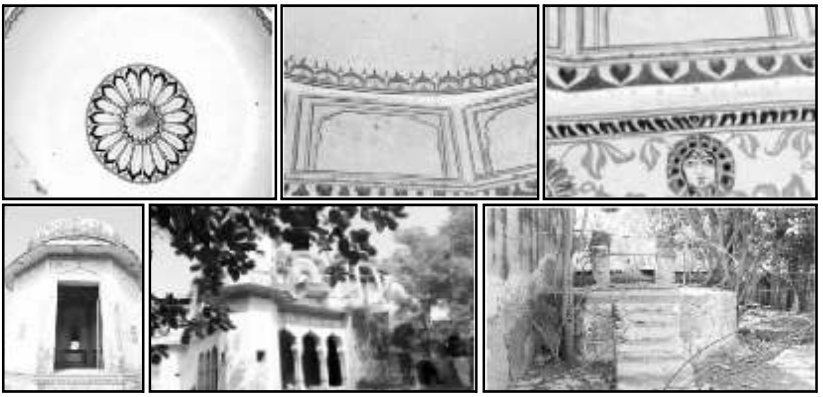

इस दुमंजिला छतरी में 19 सीढ़ियाँ हैं। ऊपर का प्रवेश द्वार छोटा है। द्वार के दोनों तरफ स्वागत करते व्यक्तियों के चित्र हैं। चित्रों में नीले, हरे, लाल व तम्बाकु रंगों का प्रयोग किया गया है। बीकानेर राज्य के चित्रों में इन रंगों का प्रयोग अधिकता से किया गया है। छतरी की दूसरी मंजिल के चारों ओर 27 बंगलियाँ बनी हैं। छतरी के अंदर फूल–पत्ती की पेण्टिंग की गई है। छतरी के अंदर मध्य में दोहरे कमल का चित्र बनाया गया है। छतरी के बाहर व अंदर सुन्दर पेण्टिंग की गयी है। छज्जे व ड्रम के बाद इकहरी वलय है व कमलाकृति का गुम्बद बना हुआ है। गुम्बद के ऊपर टूटी हुई गुमटी बनी हुई है। यह छतरी कक्षनुमा आकार में बनी हुई है। इस दुमंजिला छतरी में भी बारात ठहरती थी।

18. मंत्रियों की विशाल छतरी :–

वि.सं. – 1928

ई. – 1871

शक संवत–1793

मंत्रियों की कुछ पुरानी और छोटी छतरियां तो माहेश्वरियों के डंडे में हैं, लेकिन

उनकी अपेक्षाकृत नवीन और विशाल छतरी उत्तर दिशा में, झारिया की मोरी से कुछ आगे गोशाला मार्ग पर स्थित है। छतरी का बाहरी द्वार पूर्वाभिमुख है। छतरी के नीचे शिवालय है, छतरी में गौरीशंकरजी का मंदिर भी है। छतरी दो मंजिली है जिसमें ऊपर जाने के लिए सीढ़ियां बनी हैं। सीढ़ियों की संख्या 26 है। छतरी के चारो ओर सुन्दर बंगलियाँ बनी हुई हैं जिन पर कई चित्र बने हैं:-कृष्ण भगवान, गणेश भगवान व ऋद्धि-सिद्धि, घोड़े पर आदमी है जिनके हाथ में भाले हैं। छतरी में कोई लेख नहीं है लेकिन सीढ़ियों के पास जो कीर्ति स्तम्भ[29] लगा है, उस पर छतरी के निर्माण संबंधी संक्षिप्त सूचना अंकित है, जिसके अनुसार इस छतरी की प्रतिष्ठा वैशाख सुदि 7, संवत् 1928 को हुई, छतरी पर लागत 6700 रु. आई[30]। छतरी में काफी भित्ति चित्र हैं। टोडी या शालभंजिका व उष्णीश पर फूल-पत्तों की डिजाइन है। गुम्बद में नीले रंग के पान के पत्तेनुमा डिजाइन है। इसके ऊपर गणेशजी रिद्धि-सिद्धि के साथ है तथा भगवान

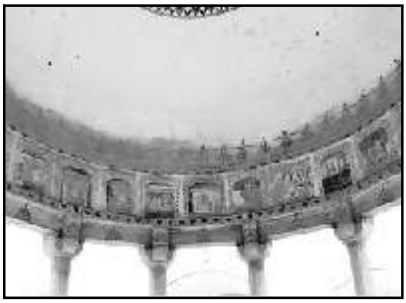

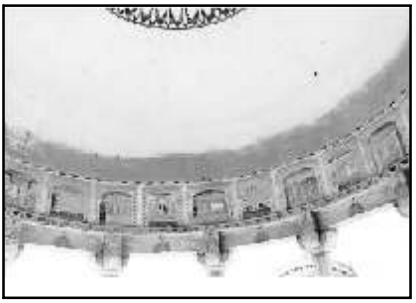

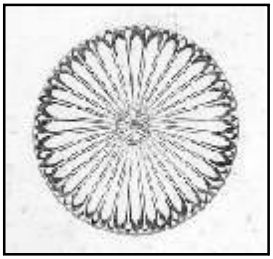

विष्णु के विभिन्न अवतारों का चित्रण है। इससे ऊपर दूसरी पंक्ति में कृष्ण–गोपियाँ एक दूसरे का हाथ पकड़े नाच रहे हैं। इस विशालकाय छतरी में लगभग 30 सीढ़ियाँ हैं। छतरी के मुख्य द्वार में चित्रकारी की गई है। मुख्य दरवाजे के दांयी–बांयी तरफ तिबारीनुमा बंगली है। पीछे की तरफ भी ऐसी तिबारीनुमा बंगली है। छतरी के चारों कोनों पर चार–छोटी छतरियाँ सौन्दर्य वृद्धि के लिए बनायी गयी है। इस दूसरी मंजिल पर मुख्य छतरी बनी है। स्थानीय निवासियों की जानकारी के अनुसार दो तथ्य सामने आये कि या तो यह छतरी चिमनारामजी मंत्री की है या भारत के जाने–माने उद्योगपति घराने घनश्यामदासजी बिड़ला की बेटी दाखा देवी की है जिनका विवाह इस मंत्री परिवार में हुआ था। छतरी में 12 स्तम्भ हैं, प्रत्येक स्तम्भ 7 फुट 8 इंच का है। प्रत्येक स्तम्भ पर 12 पट्टीनुमा डिजाइन है। छतरी का चत्वर 5 फुट 4 इंच ग 12' चौड़ा व 2 फुट 2 इंच ऊँचा है। छज्जे व ड्रम के बाद इकहरी वलय व कमलाकृति का विशाल गुम्बद है[31]। गुम्बद के ऊपर उल्टे कमल की आकृति, वलय, उस पर एक कमल तीन अलग–अलग हिस्सों में मिलकर बनी गुमटी है। छतरी के नीचे पंचमुखी शिवालय है जो कि अपने–आप में बेजोड़ व अनूठा है।

19. लोहियों की दूसरी बड़ी छतरी :–

बागलों की छतरी से कुछ ही कदम उत्तर की ओर लोहियों की दूसरी बड़ी छतरी है। अन्य विशाल छतरियों (मंत्रियों की, बागलों की छतरियाँ) की तरह इसके चारों ओर भी पर्याप्त खाली जगह है जहाँ यात्री व बाराती ठहरा करते थे। पास में ही हनुमानजी की बंगली है। कुण्ड और पायतण है। लेकिन छतरी में निर्माण संबंधी कोई लेख नहीं है। छतरी से उत्तर की ओर इसी गोशाला मार्ग पर लोहियों का कुआं व बगीची है। बगीची में बनजारे व कुत्ते की समाधियां हैं, इसलिए इसे बनजारा वाली बगीची भी कहते हैं। इसके आगे तेजपाल लोहिया की बगीची है जिसमें कभी व्यायामशाला चला करती थी।

छतरी दुमंजिला है जिसमें 15 सीढियाँ हैं। छतरी का मुख्य प्रवेश द्वार तिबारीनुमा बना है। द्वारा के दोनों तरफ आदमी का चित्र बना है जो वेश–भूषा से किसी सेठ जैसे दिखते हैं। मुख्य द्वार पर मध्य में गणेश भगवान व रिद्धि–सिद्धि के चित्र बने हुए हैं। मुख्य छतरी बीच में है जिसके चारों कोनों में चार छोटी छतरियाँ व चार तिरबारीनुमा बंगलियाँ (प्रवेश द्वार सहित) बनी हुई हैं। मुख्य छतरी बंद कक्षनुमा है जो 2 फुट इंच ऊँचे चत्वर पर बनी है। छतरी को दरवाजा लगाकर बंद किया हुआ है[32]। छतरी की बाहरी दीवारों पर भी पेण्टिंग की हुई है। नीचे की मंजिल में दो कक्ष बने हुए है।

20. मंत्रियों की दूसरी विशाल छतरी :-

गोशाला मार्ग पर ही तेजपाल लोहिया की बगीची से सटी हुई उत्तर की तरफ मंत्रियों की दूसरी विशाल दुमंजिली छत्री है। पहले इसमें नाथ सम्प्रदाय के साधु-संध रहा करते थे, इसलिए यह नाथों की बगीची[33] के नाम से भी जानी जाती है। छतरी दुमंजिला है जिसमें 27

सीढियाँ है। मुख्य द्वार सहित 10 तिरबारीनुमा छतरियाँ व चार कोनों पर सौन्दर्य वृद्धि करती हुई चार छतरियाँ है। छतरी एक छोटे महलनुमा आकृति में दिखाई देती है। छतरी में कुंआ भी है लेकिन छतरी के निर्माण संबंधी कोई लेख प्राप्त नहीं हुआ है। छतरी में सुन्दर भित्ति चित्र है। छतरी में 12 स्तम्भ हैं। स्तम्भों में पट्टीनुमा डिजाइन है। छतरी के उष्णीश या बडेरिया के ऊपर फूल-पत्तो की डिजाइन बनाई हुई है। मंत्रियों की पहली विशाल छतरी की तरह इसमें भी पहली पंक्ति में गणेशजी, रिद्धि-सिद्धि के साथ भगवान के अनेक रूपों का चित्रांकन किया गया है। नीचे से ऊपर दूसरी पंक्ति में भगवान श्री कृष्ण गोपियों के साथ नृत्य करते हुए चित्रांकित किये गये हैं। चित्रों में नीले, हरे, तम्बाकू रंगों का अधिकता से प्रयोग किया गया है। गुम्बद के मध्य में पुष्पाकृति अंकित है। चित्रों का चित्रांकन आला-गीला (फ्रेस्को-बूनो) पद्धति से किया गया है। छतरी का गुम्बद कमलाकृति जैसा है। उसके ऊपर उल्टा कमल व तीन वलय व शंकु से निर्मित गुमटी है। छतरी को देखने पर दिव्य मंदिर या छोटे सुन्दर महलनुमा प्रतीत होती है। छतरी का गुम्बद वर्तमान में सुनहले-रंग से रंगा हुआ है। छतरी का निर्माण लाल पत्थर व चूने से किया गया है।[34]

ओसवालों के डंडे की छतरियाँ

भगवानदासजी बागला के डंडे से पूर्व की ओर कुछ दूरी पर ओसवालों का डंडा (श्मशान) है जिसमें कई स्मारक छतरियाँ व तिरबारियाँ आदि हैं। चूरू जिले में तिरबारियाँ खूब हैं। तिरबारीनुमा आकृति कई जगह बनी हुई है। ओसवालों के डंडे की प्रमुख छतरियाँ निम्नलिखित हैं:-

21. बिंजराजजी बांठिया की छतरी :-

वि.सं. - 1887

ई. - 1830

शक संवत-1752

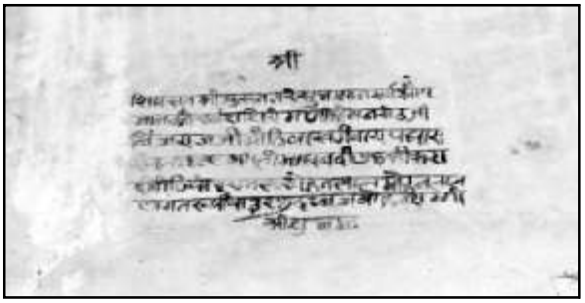

यह छतरी ओसवालों के डंडे में स्थित है। यह छतरी डांडे में पूर्व दिशा में बांयी ओर स्थित है। छतरी में काली स्याही से भित्ति लेख लिखा है-श्री शिवसत श्री चूरू नगरे, सुभस्थान सर्व औपमान ओसवंश शिरोमणि श्रीमान् सेठ बिंजराजजी बांठिया स्वर्गवास पधारा। संवत् 1887 मिति माघ बदी 7, छतरी कराई, बांठिया भूरामल, सोहनलाल, मोहनलाल, लागत रुपिया 321, दसकत ब्रजमोहन शर्म्मा। श्री शुभमः।[35]

यह छतरी 2 फुट 8 इंच वेदिका व 5 फुट 8 इंच वर्गाकार व एक फुट 3.5 इंच ऊँचे चत्वर पर निर्मित है। छतरी में चार स्तम्भ हैं। प्रत्येक स्तम्भ 5 फुट 10 ईंच लम्बा है। स्तम्भ अनलंकृत है। छतरी अष्टकोणीय है व गुम्बद सादा है। छतरी का महराब आंशिक शंकुदार है। गुम्बद के ऊपर उल्टा कमल व क्षतिग्रस्त गुमटी है।

22. सुखलालजी पारख की छतरी :-

वि.सं. - 1989

ई. - 1932

शक संवत-1854

यह छतरी ओसवालों के डंडे में जुहारमलजी दुग्गड़ की तिरबारी के पीछे स्थित है।[36]

छतरी में लाल प्लस्तर पर सोने की कलम या पीली स्याही से लेख लिखा है। कीमत रिपिया–791, श्रीमान् सेठजी सुखलालजी पारख जन्म संवत् 1917 मिती भादवा सुदी 13, स्वर्गवास 1989 ज्येष्ठ सुदी 2 यह छतरी आपके स्मारक स्वरूप बनाई गई, पुत्र छगनलाल छोटूलाल पौत्र जैचंदलाल पारख समत 1989 भादवा बदि 1, जीनस भाव–1.7, मोठ 1.5, गुंवार 1.8, गेहूँ 1.1, सकर 7, सोनो 31 रु. तोलो, रूई को फाटको[37], छतरी तैयार करी, हुसैन चेजारा[38], दसतखत रावतमल पारख।[39]

यह छतरी एक कक्ष के ऊपर निर्मित है। छतरी का चत्वर 5 फुट x 5 फुट इंच का है अर्थात् वर्गाकार है। चत्वर की ऊँचाई 1 फुट 3 इंच है। छतरी में 4 स्तम्भ हैं। प्रत्येक स्तम्भ 5 फुट का है। छतरी में अष्टकोण है। छतरी का निर्माण चूने व पत्थर से किया गया है। शंकुदार महराब, छज्जा, ड्रम अलंकृत है। गुम्बद की डिजाइन कमल दल के समान है। गुम्बद के ऊपर उल्टा कमल व क्षतिग्रस्त गुमटी है।

23. गणेशदासजी पारख की छतरी :–

वि.सं. – 1955

ई. – 1898

शक संवत–1820

यह छतरी ओसवालों के डंडे में सुखलालजी पारख की छतरी के पास स्थित है। छतरी में लाल प्लस्तर पर सोने की कलम व पीली स्याही से लेख लिखा है। यद्यपि लेख अस्पष्ट है परन्तु सावधानीपूर्वक पढ़ने का प्रयास किया गया है, लेख के अनुसार–संवत् 1955, ।। श्री गणेशाय नमः ।।.....चंदजी का पुत्र गणेशदासजी पारख ऊपर छत्री कराई। रुपिया–551 ।.

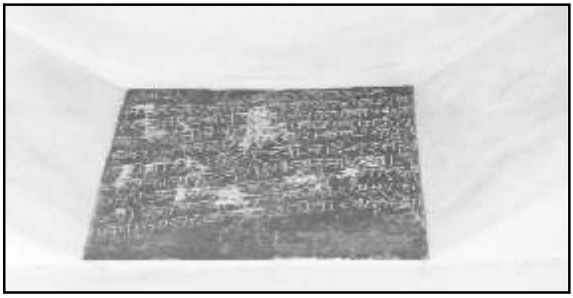

.....वस्तुओं के भाव.....बालू चेजारा.....छत्रि करि.....दसकत.....
का छै सं. 1955 का मिती मंगसर तृतीया श्री रस्तु।।[40]

इस तिबारीनुमा या तिरबारीनुमा छतरी में 16 स्तम्भ हैं। छतरी के महराब, उष्णीश पर हरे, नीले व लाल रंग से फूल पत्तों की डिजाइन बनी है। स्तम्भ के आधार पर उल्टा कमल फिर वलय, फिर सीधा कमल व कमल दल फिर वलय सीधा कमल। पुंकेसरनुमा डिजाइन, फिर उल्टा कमल, वलय फिर सीधा कमलनुमा डिजाइन बनी है। तिरबारीनुमा छतरी के मध्य में एक बड़ा गुम्बद व दांये-बांये छोटे-छोटे गुम्बद हैं जिन पर कमल दल की डिजाइन बनी है। तीनों गुम्बद पर उल्टा कमल है। गुमटी क्षतिग्रस्त है।

24. ओसवाल वंश की छतरी (प्रथम) :-

यह तिरबारीनुमा छतरी गणेशदासजी पारख की छतरी के पास स्थित है। इसमें कोई लेख नहीं मिला है। यह तिरबारीनुमा छतरी एक वेदिका पर स्थित है। इसमें चार सीढियाँ हैं। इस तिरबारी में दो बारीयाँ बनी हैं। छतरी में 6 स्तम्भ हैं। स्तम्भ के आधार पर कमल की डिजाइन व दो वलय हैं। शंकुदार महराब हैं। छः छोटे गुम्बदों के बीच दो बड़े गुम्बद हैं। छः गोलाकार गुम्बदनुमा डिजाइन हैं जो मंदिरों में मिलती है। कमलाकृति वाले सारे गुम्बदों पर उल्टा कमल व क्षतिग्रस्त गुमटी दिखाई देती है। चूने-पत्थर से निर्मित इन छतरियों पर सफेदी की हुई है। तिरबारीनुमा छतरियाँ देखने में बड़ी आकर्षक लगती है।[41]

25. धनपतसिंह कोठारी द्वारा निर्मित तिरबारीनुमा छतरी :-

यह तिरबारीनुमा छतरी ओसवालों के डंडे में मुख्य द्वार के सामने संगमरमर की छतरी के पास स्थित है। इस छतरी में काली स्याही से वस्तुओं के भाव लिखे है। इसके अलावा यह भी लिखा है कि पौत्र धनपत सिंह कोठारी ने अपने दादा की स्मृति में इस अठखंभा तिरबारीनुमा छतरी का निर्माण

किया।[42] इन तिरबारियों के महराब शंकुदार हैं। इस तिरबारीनुमा छतरी में 8 छोटे गुम्बदों के मध्य तीन बड़े गुम्बद हैं। 8 गोलाकार छतरियाँ हैं। इनकी सुंदरता पर्यटकों को बरबस आकर्षित करती है। चूने व पत्थर से तिरबारियाँ निर्मित हैं।

26. ओसवाल वंश की छतरी (द्वितीय) :-

ओसवालों के डंडे के मुख्य द्वार के सामने बांयी तरफ धनपतसिंह कोठारी द्वारा निर्मित तिरबारी/तिरबारीनुमा छतरी के पास युग्म में दो छतरियाँ संगमरमर से निर्मित खड़ी हैं।

यह छतरीयुग्म संगमरमर की वेदिका पर निर्मित है। इसमें कोई लेख या शिलालेख प्राप्त नहीं हुआ है। आयताकार वेदिका पर पान के पत्तों की डिजाइन बनी है। चत्वर पर भी यही डिजाइन बनी है। दोनों छतरियाँ आकार-प्रकार में एक समान है। प्रत्येक में चार स्तम्भ है। स्तम्भ का बुनियादी भाठे का आधार सादा, फिर फूल-पत्तियों की डिजाइन है। फिर उल्टा कमल, वलय, सीधा कमल बना है। उसमें से दोहरे कमल दल में से पुंकेसरनुमा डिजाइन निकल रही है। फिर ऊपर उल्टा कमल वलय, सीधा कमल, फिर उसमें से कमल फूल निकला हुआ है। टोडी या शाल भंजिका पर बेल, पुष्प-पत्ते उकेरे गये है। छज्जे के पश्चात् अलंकृत ड्रम है। गुम्बद कमलाकृति का है। गुम्बद के ऊपर उल्टे कमल शंकुनुमा गुमटी बनी हुई है।[43]

27. जगरुपजी, कपूरचंदजी एवं खेतजी कोठारी की छतरी :-

वि.सं. - 1911

ई. - 1854

शक - 1776

यह छतरी ओसवालों के डंडे में प्रवेश द्वार के बांयी तरफ अन्दर स्थित है। छतरी

में लाल प्लस्तर पर पीली स्याही से लेख लिखा है।[44] - ।। श्री गणेशाय नमः।। पूज्य दादाजी श्री जगरूपजी पिताजी कपूरचंदजी भाईजी श्री खेतजी दासजी कोठारी की स्मृति में श्री हजारीमलजी कोठारी द्वारा छत्री-स्मारक का निर्माण किया गया। संवत् 1911, श्रावण शुक्ला 15 ।

तीन छतरियों का यह समूह एक कक्ष पर निर्मित है। तीनों छतरियाँ कक्षनुमा बंद आकृति में हैं। मध्य की छतरी बड़ी है जिसके दोनों किनारे छोटे

गुम्बद है। मध्य में बड़ा गुम्बद हैं। छतरी की बाहरी दीवारों पर पेण्टिंग की हुई है। छतरियों का आकार पालीवालों की छतरी से कुछ मिलता जुलता है।

28. राइचंदजी कोठारी की छतरी :–

वि.सं. – 1853

ई. – 1796

शक संवत – 1718

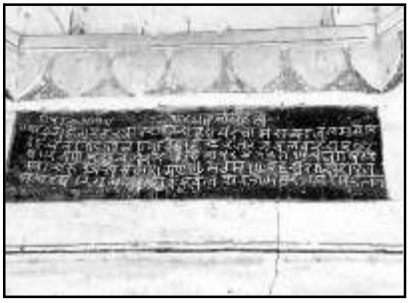

यह छतरी ओसवालों के डंडे में प्रवेश द्वार के बांयी ओर स्थित है। छतरी में लाल प्लस्तर पर लेख लिखा है। लेख के अनुसार–श्री रामजी सहाय। राइचंदजी कोठारी ऊपर छतरी हुई चूरू अमरचंद जालमचंद कराई। समत 1853, मिती जेठ सुदी 8। राज अलाबकस (फकर), छतरी चिणी कसबै चूरू का दै। हुंडी जयपुर की पडत 1.50 रु. बधत छै। टका सतराह, बाजरो मण 1.5, मोठ 1 मण 22 सेर दसकत.....रिपिया 80 लाघे।[45]

लगभग 3 फुट ऊँची वेदिका पर यह छतरी बनी है। इसमें 4 स्तम्भ हैं जो पत्थर व चूने से निर्मित है। स्तम्भ वर्गाकार, मोटे व अनलंकृत है। शंकुदार महराब, छज्जा व ड्रम अनलंकृत हैं। गुम्बद व गुमटी क्षतिग्रस्त है।

29. सेठ तोलाराम सुराणा की छतरी :–

वि.सं. – 1977

ई. – 1920

शक संवत – 1842

यह छतरी ओसवालों के डंडे में प्रवेश द्वार के दांयी ओर (प्रथम छतरी) स्थित है। संगमरमर से निर्मित इस छतरी के अंदर उष्णीश या बडेरिया से ऊपर अंदर की ओर संपूर्ण जीवन वृत्त का संक्षिप्त उल्लेख किया गया है।

छतरी में उत्कीर्ण लेख है–सेठ तोलारामजी सुराणा। जन्म सं. 1919 मिती आश्विन कृष्ण–9, स्वर्गवास–सं. 1985 मिती फाल्गुन कृष्णा–3। आप श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी संप्रदाय के वर्तमान आचार्य पूज्य श्री 1008 श्री कालूरामजी महाराज के परम भक्त श्रावक थे।

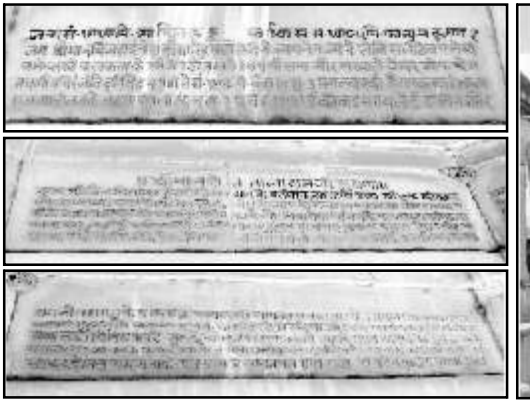

आपका राजदरबार में बड़ा मान था। 1913 ई. में जब श्रीमान् हिज हाइनेस बीकानेर महाराज ने अपने राज्य में लेजिस्लेटिव ऐसम्बली (राजसभा) स्थापित की तब चूरू की ओर से आपको मेम्बर नियुक्त किया और इस पद से आपने 1927 ई. में अस्वस्थ रहने के कारण इस्तीफा दे दिया। आप चूरू म्यूनिसिपल बोर्ड के मेम्बर रहे। कलकत्ता के श्री जैन श्वेताम्बरी तेरापंथी सभा और मारवाड़ी चेम्बर ऑफ कॉमर्स के सभापति थे। आप बड़े परोपकारी और विद्याप्रेमी थे जिसके फलस्वरूप वर्तमान सुराणा लाइब्रेरी विद्यमान है। आपके स्मारक स्वरूप यह छतरी आपके सुपुत्र श्रीमान् सेठ शुभकरणजी तथा पौत्र चिरंजीवि हरिसिंह सुराणा ने 1988 वैशाख सुदी 3, मंगलवार को तैयार करवाई। बाजार में घी, तेल, गंवार, मूंग, मोठ, सोना, चाँदी, कपड़ों के भाव स्थिर थे यह भाव राज्य आंदोलन के कारण स्थिर थे किन्तु 3 मार्च सं. 1931 ई. को वायसराय लॉर्ड इरविन और महात्मा गांधी के बीच संधि हो जाने से सब बाजारों में तेजी आ गई है। इस वर्ष चूरू की जनसंख्या 21,966 छै। द. रावतमल यति रामदेव पाठक शर्मा। शुभम्।[46]

यह संगमरमर की छतरी लगभग 4 फुट ऊँची वेदिका पर निर्मित है। वेदिका पर बंदनवार की डिजाइन बनी है। वेदिका के ऊपर अष्टकोणीय चत्वर बना है जो लगभग 3 फुट ऊँचा है। चत्वर पर फूलों की डिजाइन व बंदनवार बनी है। छतरी में आठ स्तम्भ हैं। स्तम्भ के आधार पर पुष्प की डिजाइन उकेरी गई है। फिर वलय है। कमल पुष्प आकृति व उसमें से पुंकेसरनुमा डिजाइन निकली है। उस पर उल्टा कमल फिर एक वलय बनी है। फिर सीधा कमल है। शंकुदार महराब है व शालभंजिका पर पुष्प आकृति उकेरी गयी है। छज्जे के बाद ड्रम पर पुष्पाकृति व बंदनवारनुमा डिजाइन बनी है। गुम्बद पर कमलाकृति बनी है। गुम्बद के ऊपर बनी गुमटी का आधार उल्टा कमल है।

30. ओसवाल परिवार की छतरी (तृतीय) :–

यह छतरी ओसवालों के डंडे में प्रवेश द्वार के अंदर दांयी तरफ स्थित दूसरी छतरी है।

इस छतरी में कोई लेख प्राप्त नहीं हुआ है। यह छतरी भी लगभग 4 फुट ऊँची वेदिका पर, 3 फुट ऊँचे चत्वर पर निर्मित है। इस छतरी में लगभग 5 फुट ऊँचे 8 स्तम्भ हैं। स्तम्भ के आधार में कमलाकृति फिर इकहरी वलय, फिर कमलाकृति, फिर इकहरी वलय, फिर कमल दल की पत्तियाँ व उसमें पंकुसरनुमा डिजाइन व ऊपर उल्टा कमल बना है। फिर इकहरी वलय व कमलाकृति बनी है। शंकुदार महराब छज्जे व अनलंकृत ड्रम है। गुम्बद में कमलाकृति बनी है। गुमटी का आधार उल्टे कमल से बना है। छतरी सुंदरता लिये हुए है।

31. बकसीराम टकनेत (राजपूत) की छतरी :–

वि.सं. – 1833

ई. – 1776

शक संवत – 1698

चूरू के पावटा कुआं (वर्तमान सब्जी मंडी के पास) से कुछ उत्तर की ओर हटकर नगर का पुराना श्मशान घाट था, जहाँ कुछ वर्षों पूर्व तक कई छतरियाँ खड़ी थीं, लेकिन कालचक्र की क्रूर गति से उनका नामो–निशान भी शेष नहीं रहा है। इन छतरियों में लाल पत्थर से निर्मित दो कलात्मक छतरियाँ भी थीं जिनकी शिलाओं पर नृत्य–संगीत संबंधी दृश्य उत्कीर्ण

थे। विविध वाद्य-यंत्रों के साथ कई प्रतिमायें उत्कीर्ण की गई थीं, अनेक प्रकार के सुन्दर बेल-बूटे बनाये गये थे। ये छतरियाँ चूरू के ठाकुरों की बतलाई जाती थीं, लेकिन अब उनका कोई चिन्ह शेष नहीं है।

इसी स्थान पर बनी एक छोटी गुमटी में पत्थरों पर उत्कीर्ण तीन देवलियां थीं जिनका पत्थर अब इसी जगह पर नवनिर्मित मड़दा महासती मंदिर में लगा दिया गया है। इनमें से एक देवली जो सबसे प्राचीन बतलाई जाती है, सर्वथा 'खज' चुकी है। दूसरी देवली पीले पत्थर की है जिसका आकार 10 x 36 इंच है। देवली के ऊपरी भाग में एक घुड़सवार के आगे एक सती हाथ जोड़े खड़ी है। ऊँपर चाँद-सूरज का अंकन है, लेकिन इसका स्मारक लेख सर्वथा घिस चुका है। तीसरी देवली बलुआ पत्थर की है जिसका आकार 11 x 24 इंच है। देवली के ऊपरी भाग में एक घुड़सवार व उसके आगे एक सती है। ऊपर सूर्य का अंकन व नीचे 10 पंक्तियों का एक अस्पष्ट लेख है। चूरू से प्राप्त संवत् 1747 का यह स्मारक लेख सबसे पुराना है। इसका पठित अंश इस प्रकार है-श्री गणाधिपति नमः। सं. 1747 विरषे शाके 1612 प्रर्वतमाने जेठ मासे सकल.....पखात 14 वार भूम नषत्र जेसटा साहजी श्री महेसरी मड़दा श्री।[48]

इस पुराने शमशान घाट में जो एकमात्र छतरी बची है, उसकी हालत भी खस्ता है। यह दुमंजिली छतरी टकणेतों की अठखम्भी छतरी के नाम से जानी जाती है। लेकिन नीचे वाली मंजिल तो कूड़े-कर्कट से भर दी गई है। ऊपर वाली मंजिल भी दुरवस्था में है। यह छतरी संवत् 1833 (सन् 1776 ई.) में बक्सीराम टकणेत के स्मारक स्वरूप उनके बेटों द्वारा बनवाई गई थी। छतरी के निर्माण का भित्तिलेख (पश्चिमी भित्ति पर) काली स्याही से लिखा हुआ है जिसका मुख्यांश इस प्रकार है- ।। श्री गणेशाय नमः।। श्री रामजी ।। सम्वत 1833 का मीती बैसाख सुदी 15 वार शुक्रवार छत्री ठाकुर बकसीरामजी टकनेत ऊपर कराई, ठाकर गुलाबसिंहजी, बागसिंहजी, नवलसिंहजी, सालमसिंहजी, नरसिंहदास दुलेसिंहजी, राज श्री बकसीरामजी का बेटा कराई। लागती कलस हेडो सुधा रुपिया-2201, अखरे बाइसो एक लागा। सुखो कुम्हार (खंडेला) को चेजारो चिणी है।[49]

यह छतरी दूसरी मंजिल पर स्थित है। छतरी का चत्वर 2 फुट 8 इंच व चौड़ाई 8 x 6 फुट 4 इंच है। छतरी में 8 स्तम्भ व 16 कोण है। प्रत्येक स्तम्भ 6 फुट 8 इंच का है। स्तम्भ का बुनियादी भाठा अनलंकृत है फिर इकहरी वलय, कमल के पुष्प की डिजाइन उत्कीर्ण है उसमें से पुंकेसरनुमा डिजाइन निकलती बनाई गई है। फिर इकहरी वलय व कमल पुष्प आकृति स्तम्भ के ऊपर बनी हुई है। शंकुदार महराब है व महराब के ऊपर फूल-पत्तियों के चित्र बने हुए हैं। ड्रम अनलंकृत है। गुम्बद मंदिरों के गुम्बद की तरह है जिस पर कमलाकृति बनी है। शंकुनुमा गुमटी क्षतिग्रस्त है। छतरी के गुम्बद में बहुत सुन्दर चित्र बने हैं जिनमें से कुछ पौराणिक आख्यानों पर आधृत है और कुछ तत्कालीन जन-जीवन से संबंधित है। छतरी का पूरा गर्भगृह-चित्रों से भरा हुआ है। छतरी के चित्र आज 241 वर्ष बाद भी बड़े सुन्दर दिखते हैं। चित्रों में हरे, नीले,

लाल, गुलाबी रंगों का प्रयोग किया गया है। छतरी के मध्य में एक बड़े पुष्प का चित्र बनाया गया है। उस पुष्प के चारों ओर फूल, बेल-बूंटों का चित्रांकन किया गया है। फिर एक बंदनवारनुमा गोल चित्रांकित किय गया है। चित्रों में भगवान श्री गणेश, रिद्धि-सिद्धि का चित्र, नृसिंह भगवान का चित्र, सीता माता हरण का चित्र इत्यादि है। इस चित्र शृंखला के नीचे भगवान श्री कृष्ण-गोपियों के साथ नृत्य करते हुए दिखाये गये हैं। छतरी के कोणों पर बेल-बूटों का चित्रांकन किया गया है।[50] टकनेतों की छतरी व इसके कलात्मक चित्रों को देखने के लिए देशी विदेशी पर्यटक भी खूब आते हैं।

32. सीताराम खेमका की छतरी :-

वि.सं. - 1937

ई. - 1880

शक संवत - 1802

माहेश्वरियों के डंडे से उत्तर की तरफ सीताराम लच्छीराम खेमका की बगीची में सीताराम खेमका के ऊपर बना अठखंभा है जिसके नीचे शिवालय है। अठखंभा के गुम्बद में लाल पत्थर पर लेख अंकित है - ।। श्री गणेशाय नमः।। सीतारामजी खैमकै ऊपर अठखंभों करायो मिती बैशाख सुदि 1, समत 1937। श्री हणमानजी जसकत (दसकत) जयरामदास स्यामी का.....।[51]

शिवालय के ऊपर दूसरी मंजिल पर यह छतरी पत्थर व चूने से बनी है। छतरी का चत्वर 1 फुट ऊँचा व 3 फुट 9 इंच (गुणा) चौड़ा है। छतरी में 8 स्तम्भ हैं। प्रत्येक स्तम्भ 4 फुट 3 इंच का है। बुनियादी भाठा सादा है, फिर एक वलय, कमल-दल की लंबी पत्तियां, पुंकेसरनुमा डिजाइन, फिर उल्टा कमल, इकहरी वलय बनी है। शंकुदार महराब है व महराब पर नीले, हरे, लाल रंगों से बेल-पत्तियों के चित्र बने हैं। अनलंकृत ड्रम है। कमलाकार का गुम्बद व उस पर उल्टे कमल पर शंकुनुमा गुमटी लगी है। गुम्बद के अंदर मध्य में गोल घेरे में पुष्पाकृति बनी है। 16 कोणीय छतरी बड़ी आकर्षक दिखाई देती है। वर्तमान में कयूम गुर्जर इसकी देख-रेख करता है।

33. भगवानदासजी बागला की छतरी :–

वि.सं. – 1952

ई. – 1895

शक संवत – 1817

लोहियों की छतरियों से कुछ ही दूर पूर्व की तरफ भगवानदास बागला[52] की विशाल धर्मशाला और शिवबाग है। इसी शिवबाग में भगवानदासजी बागला के सांठ पर बनवाई गई छतरी थी जो अब गिर चुकी है। शिवबाग में भगवानदासजी के दाह–स्थल पर शिवालय और संगमरमर की छोटी छतरी है। छतरी के ऊपर उत्कीर्ण लेख का मुख्यांश इस प्रकार है– श्री गणाधिपत्य नमः श्री युत भगवानदासजी बागला को बैकुंठवास होयो, संवत 1952 शाके 1817 मिती कार्तिक कृष्णा 1 भृगुवासरे उनका दाह संस्कार करवाया, उस जगा पर शिवालय बणाया श्री सदाशिव हेतवे श्लोक.....द. सांवलै ओझे का श्री विश्वनाथाय नमः।।[53]

संगमरमर से निर्मित यह छतरी 4 फुट 2 इंच ऊँची व 8 इंच ऊँचे चत्वर पर बनी है। छतरी बंद कमरेनुमा है जिसके चार स्तम्भ बने है। स्तम्भ संगमरमर की जालीनुमा डिजाइन से जुड़े हैं। स्तम्भ के बुनियादी भाठे पर पुष्पाकृति अंकित है। फिर एक वलय, कमल पुष्पाकृति व उसमें से पंकेसरनुमा डिजाइन निकली है। फिर उल्टा कमल, इकहरी वलय व कमलाकृति बनी है। शंकुदार महराब है व अलंकृत शालभंजिका है। वेदिका, चत्वर व ड्रम पर बंदनवारनुमा आकृति बनी है। कमलाकृति गुम्बद पर धातु की गुमटी बनी हुई है। गुम्बद का आंतरिक भाग अष्टकोणीय है। गुम्बद के मध्य में दोहरे पुष्प की आकृति को उकेरा गया है।

34. लोहियों की छतरियाँ (जगमणदासजी, आशारामजी एवं जोखीरामजी) :–

वि.सं. – 1916

ई. – 1859

शक संवत – 1781

चूरू नगर में लोहिया परिवार की महत्त्वपूर्ण देन रही है। इस परिवार द्वारा बनवाये गये दो बड़े मंदिर, छतरी, कुएँ, धर्मशाला व बगीचियाँ आदि आज भी मौजूद हैं। इस परिवार में

अनेक नामिक व्यक्ति हुए। कलकत्ता में आज भी नाहरमल लोहिया लेन तथा भजनलाल लोहिया का कटरा मशहूर है। चूरू के लोहिया कुंजीलाल बिहार में एक देशी रियासत के दीवान थे। इनके द्वारा राँची में बनवाया गया राधा वल्लभजी का मंदिर प्रसिद्ध है।

सर्वप्रथम इस परिवार के पूर्व पुरुष केशोरायजी फतहपुर से चूरू आये। केशोरायजी एवं उनके बड़े पुत्र जीवणरामजी की स्मारक छतरियाँ भगवानदासजी बागला के डंडे में खड़ी हैं। इनके अतिरिक्त इस परिवार की दो अन्य विशाल छतरियाँ हैं जिनमें से एक गोशाला मार्ग पर स्थित है एवं दूसरी जौहरी सागर[54] जोहड़े[55] के सामने दक्षिण की ओर है। छतरी के चारों ओर विस्तृत चौभींता बना है जिसका प्रवेश द्वारा उत्तराभिमुख है। दरवाजे से भीतर प्रवेश करने पर दाईं ओर बड़ा कुण्ड व पायतण है। सामने चौड़े चबूतरे पर शिवालय है, दूसरी मंजिल पर जाने के लिए सीढियाँ बनी हैं। छत के चारों ओर पहलदार गुमटियों के बीच लोहिया परिवार के तीन दिवंगत सदस्यों की स्मृति में दो छतरियाँ और उनके बीच में एक अठखंभा बना है। बीच वाले अठखंभे का लेख इस प्रकार है– ।। श्री गणेशाय नमः।। 'स्वस्त श्री राज राजेश्वर श्रीमण छत्रपति श्री 108 श्री सिरदारसिंघजी के राज मध्ये चूरू में अग्रवाल गर गोती लोया केशोरायजी ततपुत्र जीवणरामजी ततपुत्र जगमणदासजी ऊपर अठखंभो बणो छै। ततपुत्र आशारामजी ततपुत्र जोखीरामजी तत पुत्र चिरंजीव रूकमानंदजी, जोरावर, भादरमल, किसनलाल अठखंभो करायो संवत् 1916 का शाके 1781 का प्रवर्तमाने मिती अस्वमासे शुभे शुक्ल पक्षे तिथ्यो 3 गुरुवारे। सरबस्तु भाव।। बाजरी मण 2, मोठ मण 2.50, घृत 4.75, तेल सेर 11, गेहूँ मण 1.25, हुण्डी भाव जयपुर 4.50, भ्याणी 87.50, कलकत्ता 4.25, गुडसेर 21, खाण्ड रुपिये 1, 5.1 सेर। जमानो चोखो परमेसर करो छै। जोड़ै में जल पैडियां आयो। चूनो कराई दर 1.50 रु., चूना ढुवाई गाड़ी रुपियो 1, नग 9। भाटा पक्का भाव रुपिया 20 सैकड़ै लार ढुवाई मोल सुदां। खोर भाव रुपिये 1 नग गाड़ी 20 ढुवाई रिपिये 1 गाड़ी नग 20। टका भाव रुपिये 1, चैरासाई का नग 1 9125। जसकत ब्राह्मण हरतवाल चिमनरामजी ततपुत्र जैगोविन्द का छै जसकत।। कारीगर सिरदारो, लालो गुलो दरोगो नाजूखाँ क्यामखानी। शुभं भुयात कल्याणमस्तु।।[56]

इस अठखंभे के दाहिनी ओर आशारामजी लोहिया पर बनी छतरी है, जिसका लेख है– ।। श्री रामजी। संवत 1916 मिती भादवा सुदि 14, या छत्री आशारामजी लोया पर हुई है। भाव सगली वस्तु को इस भांत टका दर 20.5, धृत सेर 4.75, गीहूँ सेर 41, बाजरी सेर 60, मोठ सेर 100। चूनो कालियो द. 2.50 रु. सैंकड़ो, चूनो धोलियो सूको दर 1.50 करायो सैकड़ै, 1 चूनै की गाड़ी 20 रु. 1, भाटा की पड़तई दर 7 सैंकड़ों 1, रुगो नाजुखाँ क्यामखानी।[57] बीच वाले अठखंभे के बाईं ओर जोखीराम के ऊपर बनी छत्री है जिसे अठखंभा भी कहा गया है। छतरी का लेख इस प्रकार है– ।। श्री गणेशाय नमः।। छत्री संवत 1916 का शाके 1781 प्रवर्तमाने मिती अश्विन मासे....पक्षे तिथो 30 सोमवारे अठखंभो लोयो जोखीराम ऊपर छै, करायो पुत्र चिरंजी रुकमानंदजी जोरावर भादरमल किसनलाल अठखंभो करायो चूरू। मोठ मण 2.50, धिरत 4.75, बाजरी मण 1.50 सेर, 5 टका 20 चेरासाही का। जसकत ब्राह्मण जै गौबिन्द का पुत्र चिमनराम को, कारीगर लाला, गुलो।[58]

तीनों छतरियाँ दूसरी मंजिल पर स्थित है। चारों ओर पहलदार गुमटियों के बीच तीनों छतरियाँ स्थित हैं। जिनका नाप लगभग एक समान है। छतरियों का चत्वर 1 फुट 8 इंच ऊँचा व 6 फुट 6 इंच गुणा 8 चौड़ा है। छतरी में 8 स्तम्भ हैं प्रत्येक स्तम्भ 5 फुट लम्बा है। छतरी में 16 कोण हैं। शंकुदार महराब है। गुम्बद में मध्य में सूर्य व चारों ओर इन पत्तियों का चित्रांकन किया गया है। कमलाकार का गुम्बद व शंकुनुमा गुमटीयाँ बनी हुई हैं। छतरियों का चित्रांकन भी सुन्दर है। वर्तमान में छतरी के आस–पास का खाली स्थान व छतरी को बेच दिया गया है। छतरी के चारों ओर ईंटों की दीवार बनाकर उसे गोदाम बना दिया गया है, जो चिंता का विषय है।

35. यति ऋद्धिकरणजी की छतरी :–
वि.सं. – 2000
ई. – 1943
शक संवत – 1865

यति ऋद्धिकरणजी अपने समय के माने हुए चिकित्सक थे। एक सुयोग्य चिकित्सक के रूप में उनकी ख्याति दूर–दूर तक थी। जौहरीसागर तालाब के पश्चिम में यतिजी का बगीचा (दादा–बाड़ी) है, जिसमें अनेक जैन संतों की साभिलेख चरण पादुकाएँ हैं। इनमें इनके गुरु की भी समाधि स्थल पास में ही बना है। इस दादा बाड़ी में दक्षिणी द्वार

से प्रवेश करते समय दाईं ओर सफेद संगमरमर के चबूतरे पर चार स्तम्भों पर संगमरमर की छतरी है जिसमें संगमरमर से निर्मित चरण-पादुका लेख है। पादुका लेख के पूर्व की ओर गोमुख उकेरा गया है। उसके ऊपर लेख खुदा हुआ है-''श्री खरतरगच्छीय पं.प्र. यतिवर श्री ऋद्धिकरणजी की चरण पादुका प्रतिष्ठा वि.सं. 2000 कार्तिक शुक्ला 11, सोमवार।[59]

छतरी का गुम्बद कमलाकार है व ऊपर गुमटी बनी हुई है। छतरी सुन्दर व आकर्षक है।

36. जालीरामजी पोद्दार की छतरी :-

वि.सं. - 1890

ई. - 1833

शक संवत - 1755

चूरू के पूर्वी भाग में सेखसरियों के कुएँ और धर्मशाला के पास पोद्दारों की विशाल छत्री है। यह स्थान काफी विस्तृत है। इसमें कुआं, कुण्ड, शिवालय एवं हनुमानजी का मंडप भी बना हुआ है। इस विस्तृत स्थान के बीचों-बीच दुमंजिली छत्री है जिसे 'बावन-खंभा' कहा गया है। इस बावन खंभे का निर्माण सेठ जालीराम पोद्दार (पोद्दार) की स्मृति में करवाया गया है। इस 'बावन-खंभे' की बनावट बहुत भव्य है। छत्री का मुख्य गुम्बद कई खंभों पर निर्मित किया गया है। यह छतरी भी लोहियो, मंत्रियों व टकनेतों की छतरी की तरह विशाल गुम्बद वाली विशाल छतरी है। गुम्बद में 16 ताखे बनाये हुए हैं जिनमें से 15 में कलात्मक बेल-बूँटे चित्रित किये गये हैं। पूरी छतरी की पहली व दूसरी मंजिल चित्रों से सुसज्जित है। पहलदार गुमटियों के बीच विशाल गुम्बद व आस-पास छोटे गुम्बद है। पूर्व दिशा की ओर वाले 16वें ताखे में लाल प्लस्तर पोतकर लोहे की कलम से लेख उत्कीण किया गया है जो कुछ अस्पष्ट है, लेख के अनुसार-ऊँ श्री सदगुरु दयाल....., महाधिराज महाराज श्री रतनसिंहजी राज्य मध्ये बावन खंभों करवायो संवत् 1890 का.....संवत्सरे अस्मिन् नृपति विक्रमादित्य राज्यात संवत् 1888 का मासोत्मोमासे बैशाख मासे कृष्ण पक्षे तिथ्यौ सप्तम्या सोमवासरे सेठजी श्री जालीरामजी बैकुंठ धाम पधारया जिन पर करायो। 52 बावन खंभो पार पड़ोसमत 1890 का मिती कार्तिक सुदि 1 नै करवायो। अगरवाल वैश्योद्भव बांसल गोत्रे पोतदार लालाजी चिरंजीव रामशरणदास सुखदियाल राम

नारायणजी तीनूं जणां सामल होय कर करवायो। जगत मांह बड़ो जस हुवो। सत्पुत्रां की येही रीत है जिसी करी। शुभममस्तु।

चेजगारा षाजुषां (खाजुखाँ) मदारीषा (मदारीखाँ) जीवणषां (जीवणखाँ) तस्य हस्त विलासो नरचितं अति शोभित वां चूरू नगर मध्ये। दसकत मिश्रजी श्री शंभुराजी तत्पुत्र चुन्नीलाल (दरोगो) राखो रूपो दिलवाल काम करवायो। 52 खंभो पार पड़ो जद भाव इण भांत छा–गीहूं सेर 0.75 रु. बाजरो सेर 0.75 का 5, मोठ मण 1.25 रु. टका 2 (4) धिरत सेर 4, तिल सेर 0.50 का 5।[60]

इस मुख्य छतरी की चारों दिशाओं में गोलाकार छतरियाँ एवं महराबदार गुमटियाँ बनाई गई हैं। मुख्य छतरी के साथ–साथ इन गुमटियों आदि में भी काली स्याही से यहाँ ठहरने वाले लोग अपने नाम–ठाम व अन्य ब्योरे लिखते रहे हैं। दक्षिण दिशा की ओर बनी एक महराबदार गुमटी में काली स्याही से दो लेख लिखे हैं–

पहला लेख–श्री रामजी समत 1912 मिती बैसाख सुदी 1, मंगलवार कै दिन सिरदार अता चूरू आया, श्री हजूर सूं मेल्या राज श्री सिवनाथसिंघजी रामसिंघोत, बीदासर का। राज श्री हमीरसिंघजी मंगलसिंघोत, गोपालपुर का। राज श्री कंवरजी बखतावरसिंघजी संगरामसिंघोत, चाड़वास का। राज श्री मोतीसिंघजी शिवजी सिंघोत काणूतै का, राज श्री मोतीसिंघजी गुलाबसिंघोत बाघसुरा का। राज श्री रूपसिंघजी अगरसिंघोत, बड़ाबर का। राज श्री मेदसिंहजी चैन सिंघोत, गुलेरियां का, येता सिरदारां साथे चारण चेलो आयो जकै ओ नांउ मांडो। बांचै जनै राम राम बांच जो।[61]

दूसरा लेख– ।। श्री रामजी। साल 1933 फागण सुदी 12, दीतवार घोड़ा 50, ऊँट 25 श्री बीकानेर सु आया। श्री जी साहबां मेला आईदान बीदावत.....राज श्री ठाकुर सीवनाथसिंघ भागु सिंघोत गां.....जोग लिया का। ठाकर लोकां आसामी 50 घोड़ा, ओठी (ऊँट) 25 बीदावत मुकनजी।[62]

एक अन्य सूची ओर है जिसमें 33 आदमी, 17 घोड़े और 12 ऊँटों के आने का ब्योरा लिखा है।

37. सुखरामदासजी टाई की छतरी :–

वि.सं. – 1946

ई. – 1889

शक संवत – 1811

यह विशाल छतरी जो केडियों की छतरी के नाम से भी जानी जाती है[63] जो चूरू के पूर्वी भाग में रमनचंदजी मंडावेवाला के कुएँ और धर्मशाला के सामने है। यह विशाल छतरी एक बड़ी धर्मशाला में बनी है जिसका दरवाजा उत्तराभिमुख है। इसके अंदर पक्का कुण्ड व पायतण तथा बालाजी का एक मंडप है। मकान के मध्य बने बड़े चबूतरे पर बीचों बीच शिवालय है

जिसके चारों ओर तिरबारे हैं जिनमें आगंतुकों के ठहरने के लिए कोठरियाँ बनी हुई हैं। शिवालय में प्रवेश हेतु तीन द्वार हैं।

शिवालय के 16 स्तम्भों के ऊपर दुमंजिली छतरी का निर्माण करवाया गया है। छतरी का द्वार उत्तराभिमुख है एवं ऊपर जाने के लिए रास्ता बना है। ऊपरी मंजिल के बीचों बीच छतरी का मुख्य गुम्बद बना है। गुम्बद के भीतर पूरी गोलाई में कृष्ण रासलीला के सुन्दर चित्र बने हैं। उनके नीचे चौखटों में सुंदर भित्ति चित्र चटक रंगों में बने हैं। छतरी के बाहर व ऊपर व नीचे अनेक भित्ति चित्र हैं लेकिन जिन चित्रों का धूप व पानी से बचाव रहा है, वे तो बच गये हैं, शेष सारे खराब हो गये हैं। छतरी की चारों दिशाओं में छोटी बंगलियाँ, छतरियाँ व गुमटियाँ बनाई गई हैं। छतरी के बड़े गुम्बद में संवत् 1946 का एक लेख है जो उत्तराभिमुख है।[64] सफेदी पोतकर काली स्याही से लेख लिखा गया है जिसका मुख्यांश है- ।। श्री गणेशाय नमः।। ऊँ नमः स्वस्ति श्री महागणधिपत्ये नमः।। अपरंच सुखरामदासजी टाईं वाला छतरी कराई, समत 1946 शाके 1811 तत्र मासा नाम मासोत्मेमासे कार्तिक मासे शुभे शुक्ल पक्षे-पुण्य तिथौ 3, वार रविवार, नक्षत्र अनुराधा, सौभाग्य योग बालवकर्णे सूर्ये तुला राशि गते राज शुभ वेलायां छत्रिका प्रतिष्ठा कराई मनालालजी श्री सत शुभमस्तु। उपरंच जिनसां का भाव ये दै इस साल रहा-गीहूं सेर 14.50, बाजरों सेर 23.25, मोठ सेर 20, घृत सेर 1.25, खांड रिपिये 1 सेर 6, गुड 9.75, सकर सेर 7.50, चावल सेर 7.50, तेल सेर 6, मूंग सेर 13, रुई सेर 2.50, हुण्डी कलकत्ता दर 105, सोनो तोला का रिपिया 25, चांदी दर 108, इण संवत में ये भाव जिनस छै। उप्रंच कारीगर चेजारो मांबकस, दौलतखाँ को बेटो आपकी अकल हुसियारी से तथा शिल्पकला रचा करी है, चिणावट करी। अपरंच मंगसिर सुदी 3, साल 1945 साल में चेजो सरु होयो। मास 12 में तयार हुयो। करणी नण 25 तक रही। दसकत हरषै (हरखै) का, बांचै जिसको राम राम बंचणा।[65]

इसके अलावा तत्कालीन परिपाटी के अनुसार स्याही से छतरी में आकर ठहरने वाले लोगों द्वारा भी संक्षिप्त लेख लिखे गये हैं :-

दसकत महादेव का दै, बासी रामगढ़ का, सुन्दर गूजरकै ब्यावण नै आया।

दसकत महादेव गौड़ बिरामण.....का छै, बासी रामगढ़ का। जनेत आया रामगढ़ से हीरालाल के बेटै की जनेत में। ऊँट 15, आदमी 24, बांचै जनै राम राम 1958।[66]

इन सभी छतरियों के अलावा चूरू नगर के उत्तरी-पश्चिमी भाग में मुरीदों के मौहल्ले के निकट, माधोराम खेमका माध्यमिक विद्यालय के पीछे माहेश्वरियों के डंडे (शमशान) में कुछ छतरियाँ थीं, जिनमें सबसे पुरानी चौखम्भी छतरी संवत् 1815 की कृपारामजी पेड़ीवाल के ऊपर बनी थी। दूसरी अठखंभी छतरी रामदास मंत्री पर बनी थी जो संवत् 1821 की थी। मंत्रियों की 2 अन्य छतरियाँ वि.सं. 1848 में साथ-साथ बनी थी। ये कलात्मक छतरियां क्रूर काल चक्र के हाथों व उपेक्षा का शिकार, लोभ का शिकार होने के कारण खत्म हो चुकी हैं।

चूरू जिले की छतरियों की विशेषता :

1. चूरू में भित्ति-चित्रों की एक समृद्ध परंपरा रही है। यहाँ पर मंदिरों, सेठ-सहूकारों की हवेलियों और मृत्यु-स्मारकों (छतरियों) में भित्ति-चित्रों का आलेखन बहुतायत से हुआ है।
2. प्राचीनता की दृष्टि से तो भित्ति-चित्र के आलेखन में जैन धर्म का ही प्रभाव दर्शनीय है, परन्तु भागवत-धर्म का प्रभाव अधिक रहा है।
3. चूरू में दरबारी संरक्षण से परे हटकर जो स्वतंत्र रूप से भित्ति-चित्रण हो रहा था, वह भी अत्यंत महत्वपूर्ण था। निजी क्षेत्र में हो रहा यह भित्ति-चित्रण मुख्य रूप से दो रूपों में हुआ। एक धर्म प्रभावित था तो दूसरा लोक-शैली पर आधारित प्रेम-प्रसंगों को लेकर हुआ। ऐसा चित्रण चूरू जिले की छतरियों में स्पष्ट दिखाई देता है। यहाँ का 18वीं सदी का बक्सीराम टकणेत का मृत्यु-स्मारक, जो आठ खम्भों की छत्री के रूप में प्रसिद्ध है, के भीतरी भाग में पौराणिक एवं लोक-जीवन से जुड़ा चित्रण अद्वितीय है। चित्रों में हरे, नीले, लाल और गुलाबी रंगों का प्रयोग किया गया है। छतरी के मध्य में एक बड़े पुष्प का चित्र बनाया गया है। पुष्प के चारो ओर फूल, बेल-बूंटों का चित्रांकन किया गया है। चित्रों में भगवान श्री गणेश, रिद्धि-सिद्धि का चित्र, नृसिंह अवतार व हिरण्यकश्यप के वध का चित्रण, सीता माता का हरण इत्यादि चित्र हैं। इस चित्र श्रृंखला के नीचे भगवान श्री कृष्ण-गोपियों के साथ नृत्य व रास लीला करते हुए दिखाये गये हें।
4. जुहारमलजी की छतरी भी अपनी कलात्मक बनावट व भित्ति-चित्रों के लिए काफी प्रसिद्ध है। चित्रों में नीले, हरे, पीले व भूरे रंगों का प्रयोग किया गया है। छतरी के गुम्बद में राधा-कृष्ण रासलीला के 34 चित्र हैं। राधा या गोपिका के हाथ में अलग-अलग प्रकार के वाद्य यंत्र चित्र हैं। इनके नीचे 24 अवतारों के चित्र चटकीले रंगों में बनाये गये हैं। देव-अवतारों के चित्रों में प्रमुख हैं-कालिया नाग की कथा, मत्स्यावतार, शेषशय्या पर विष्णु भगवान, लक्ष्मीजी भगवान विष्णु के पैर दबा रही है व नाभि से निकले कमल पुष्प में ब्रह्माजी विराजमान है। गरुड़ अवतार, बलराम व कृष्ण भगवान, राम-सीता व हनुमान सुदामा-कृष्ण मिलन, गजेन्द्र मोक्ष कथा, गोचारण करते हुए कृष्ण भगवान, नृसिंह अवतार, गजोख अवतार के चित्रण प्रमुख हैं। मंत्रियों की विशाल दो छतरियों, लोहियों की छतरी आदि में ऐसे चित्रों की ही प्रमुखता है।
5. फूल-पत्ती का चित्रण, लोक-जीवन का चित्रण भी कई छतरियों में देखने को मिलता है।
6. चूरू जिले की छतरियों में दो प्रकार के भित्ति लेख प्राप्त हुए हैं। एक प्रकार के लेख

से छतरी के निर्माण से संबंधित जानकारी प्राप्त होती है। हस्ताक्षर व लेख काली-स्याही से व लाल रंग के ऊपर लोहे के कील से लिखे गये हैं।

इन छतरियों में ठहरने वाले कुछ व्यक्ति काली स्याही से (ग्रेफिटी) भित्तियों पर अपने नाम-स्थान, आने का उद्देश्य एवं तिथि-मिती आदि लेख दिया करते थे। इन लेखों से अनेक प्रकार की जनोपयोगी जानकारियाँ प्राप्त होती है। जैसे-टाईं वालों की छत्री में लेख के नीचे लिखा है-'दसकत महादेव का छै, बासी रामगढ़ का, सुन्दर गूजरके ब्यावण नै आया।'

'दसकत महादेव गौड़ बिरामण का छै, बासी रामगढ़ का। जनेत आया रामगढ़ से हीरालाल के बेटै की जनेत में। ऊँट 15, आदमी 24, बांचै जंनै राम राम 1958।

7. छतरियों में लिखे लेखों से कई बातों का पता चलता है। जैसे-इनके निर्माण में कितना रूपया खर्च हुआ व इसका निर्माण किसने किया। टकनेतों की छतरी (वि.सं. 1833) के निर्माण में बाईस सौ एक रुपये लगे व इसका निर्माण सुखो कुम्हार ने किया। इसके अलावा छतरी निर्माण में पैसों के बदले वस्तुएं दी गयी, उनके भावों का व मात्रा का उल्लेख मिलता है। छतरी का जिस समय निर्माण किया गया, उस समय विभिन्न धातुओं, खाद्य पदार्थों व कपास आदि के भावों का उल्लेख मिलता है। जैसे-पोद्दारों की छतरी, लोहियों की छतरी इत्यादि। छतरी निर्माण में काम आने वाले चूने के भाव, उनकी ढुलाई का भाव भी इन छतरियों में मिलता है। कई हुण्डियों व विभिन्न वस्तुओं के (फाटकों) सौदों का भाव भी मिलता है।

8. चूरू जिले में अधिकांशतः गैर शासकीय वर्ग की छतरियाँ ही मिली हैं जिनमें विशाल 7 छतरियाँ हैं। इनमें एक पोद्दारों की, दो लोहियों की, एक टाईं वालों की, दो मंत्रियों की एवं एक बागलों की है। एक टकणैत (राजपूत) की अठ खम्भा छतरी है। ओसवाल व माहेश्वरियों की बड़ी संख्या में छतरियाँ प्राप्त हुई हैं। गैर-शासकीय वर्ग, शासकीय वर्ग से आर्थिक दृष्टि से ज्यादा संपन्न था।

संदर्भ - संकेतः-

1. मरुश्री भाषा साहित्य, इतिहास एवं सांस्कृतिक त्रैमासिकी-संपादक गोविन्द अग्रवाल, लोक संस्कृति शोध संस्थान, नगर श्री चूरू। वर्ष-15, अंक (2-3) वर्ष 1986, पृ-10।
2. रामसिखदास भावसिंह का बेटा जुहारमलजी की छतरी का लेख-1960।
3. छतरी के प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर।
4. सर्वसुख अग्रवालजी की छतरी का लेख-वि.सं. 1865 के अनुसार।
5. भागीरथदासजी की छतरी का लेख-वि.सं. 1852 के अनुसार।
6. छतरी के प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर।
7. सरूपचंदजी की छतरी लेख-वि.सं. 1869 के अनुसार।

8. छतरी के प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर।
9. शिवजीसिंह चूरू के सर्वाधिक प्रसिद्ध ठाकुर थे। बीकानेर के महाराजा सूरतसिंहजी से इनकी कभी बनी नहीं, अतः उनकी ओर से चूरू पर कई चढाइयां हुईं। वि.सं. 1871 के अन्तिम चढ़ाई के समय सारा गोला-बारूद समाप्त हो जाने के पर इन्होंने चाँदी के गोले चलाये थे, जिस कारण इनको बड़ी ख्याति मिली।
10. मोतीलाल जी सांखू की छतरी लेख-वि.सं. 1852 के अनुसार।
11. छतरी के प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर।
12. रामजी छतरी लेख-वि.सं. 1800 के अनुसार। लेख कुछ अस्पष्ट है, फिर भी पढ़ने में सावधानी बरती गई है।
13. जुगलकिशोरजी की छतरी लेख-वि.सं. 1853 के अनसार।
14. यह छत्री चूरू के सुप्रसिद्ध पोद्दार परिवार से संबंधित है। इस परिवार के पूर्व पुरुष सेठ भगोतीराम फतहपुर से चूरू आकर बसे थे, इनके नाम पर यह घराना भगोतीरामजी वालों के नाम से प्रसिद्ध हुआ। भगोतीराम के तीन पुत्र अग्याराम, चतुर्भुज व जुगलकिशोर थे जिनमें से जुगलकिशोर की यह छतरी बनी है। जुगलकिशोर के पुत्र फकीरचंद थे। इस घराने में दादूदयाल जी की प्रबल मान्यता थी। इसी कारण छत्री के शिरोभाग में 'श्री दादूदयालजी सहाय छ' लिखा गया है। इस घराने में अनेक नामी गिरामी व्यक्ति हुए हैं।
15. गूजरमल सरावगी छत्री लेख, वि.सं. 1839 के अनुसार।
16. देवेन्द्र कीर्तिजी की छतरी का लेख-वि.सं. 1797 के अनुसार।
17. इस डंडे (शमशान) की साभिलेख छत्रियों में यही लेख सबसे पुराना मिला है। यह छतरी किसी सरावगी की लगती है। संग्रामसिंह चूरू के बड़ प्रभावशाली ठाकुर थे। बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह ने इन्हें संवत् 1798 में धोखे से मरवा दिया था।
18. केशाराय छतरी लेख, वि.सं. 1856 के अनुसार।
19. जीवणरामजी अग्रवाल, छतरी लेख, वि.सं. 1891 के अनुसार।
20. श्यामलाल पारीक छत्री लेख, वि.सं. 1994 के अनुसार।
21. संपतराम गोयन्का छतरी लेख, वि.सं. 1936 के अनुसार।
22. बकसीराम कंदोई, छतरी लेख, वि.सं. 2000 के अनुसार।
23. शिवबक्षराय, छतरी लेख, वि.सं. 1988 के अनुसार।
24. जमनाधरजी, छतरी लेख, वि.सं. 1976 के अनुसार।
25. जयदयाल, छतरी लेख, वि.सं. 2004 के अनुसार।
26. दिलसुखराय, छतरी लेख, वि.सं. 2007 के अनुसार।
27. ऐसा एक लेख भक्तवर जयदयालजी गोयन्दका द्वारा भी लिखा गया है-दसकत जयदयाल गोंदके का छै, बांचै जीनै राम-राम छै, मिती आसोज सुदी 8, समत 1951, बाजरो .

50/ 3 रु., गेहूँ, घी, तेल इत्यादि।

28. जयनारायण कन्हैयालाल बागला, छतरी लेख, वि.सं. 1945 के अनुसार।
29. इसे प्रतिष्ठा या प्रशस्ति लेख भी कहते हैं। राजस्थान के अभिलेख–गोविन्दलाल श्रीमाली, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, जुलाई–2000, पृ. 12–17।
30. कीर्ति स्तम्भ लेख, संवत् 1928 के अनुसार।
31. यह छतरी उत्तरी–पश्चिमी राजस्थान की ही नहीं, राजस्थान की छतरियों में सबसे विशाल गुम्बद वाली छतरी है।
32. प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर।
33. बगीची–किसी जाति विशेष या व्यक्ति विशेष का लगभग 2000 से 15000 वर्गगज तक की भूमि पर स्वामित्व वाला स्थान होता है।
34. छतरी के प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर वर्गन किया गया है। यद्यपि छतरी के मुख्य प्रवेश द्वार को खोलने नहीं दिया गया, फिर भी छतरी के आंतरिक चित्रों को कैमरे की मदद से कैद किया गया है।
35. बिंजराजजी बांठिया भित्ति लेख–वि.सं. 1887 के अनुसार।
36. ओसवाल वंशीय शिरोमणि श्री सेठ ग्यानचंदजी के प्रिय पुत्र मंगलचंदजी जुहारमलजी दुग्गड़ की स्मृति में तीबारी करवायी। यह तिबारी पदमचंद व रायचंद दुग्गड़ ने 1783 में करवायी।
37. फाटको – सौदा या बाजार में सट्टा।
38. हुसैन चेजारा व इनके परिजनों ने चूरू में छतरी, तिबारी व अन्य स्थापत्य की बेहतरीन इमारतों का निर्माण किया। इनके नाम पर मार्ग का नाम रखा गया है।
39. सुखलालजी पारख की छतरी का भित्ति लेख–1989 के अनुसार।
40. गणेशदासजी पारख की तिरबारीनुमा छतरी लेख–वि.सं. 1955 के अनुसार।
41. तिरबारीनुमा (इसमें दो बारी बनी है) छतरी के प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर।
42. तिरबारीनुमा छतरी के अवलोकन के आधार पर।
43. छतरी युग्म के प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर।
44. जगरूप, कपूरचंदजी एवं खेतदासजी कोठारी लेख, वि.सं. 1911।
45. राइचंद कोठारी छतरी लेख वि.सं. 1853।
46. सेठ तोलाराम सुराणा छतरी लेख, वि.सं. 1988 के अनुसार।
47. छतरी के प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर।
48. मड़दा महासती स्मारक लेख–वि.सं. 1747।
49. बकसीराम टकनेत (राजपूत) की छतरी का भित्ति लेख–वि.सं. 1833, ई. 1776।
50. छतरी के प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर।

51. सीताराम लच्छीराम खेमका छतरी लेख–वि.सं. 1937। लेख थोड़ा अस्पष्ट है व लेख पर विभिन्न वस्तुओं के भाव लिखे है।
52. भगवानदासजी बागला मारवाड़ियों में पहले करोड़पति माने जाते है। इनका व्यापार बर्मा में था। इनकी स्मृति में इनकी धर्मपत्नी ब्रजकुँअरी (जो सेठाणी के नाम से मशहूर है) ने चूरू से कुछ दूरी पर पश्चिम की ओर भगवान सागर नाम से एक भव्य सरोवर बनवाया था जो इस जिले का सर्वाधिक सुन्दर सरोवर और पर्यटकों के लिए आकर्षण का स्थान है। कलकत्ता में इनकी स्मृति में सेठाणीजी ने 'भगवानदास बागला हिन्दू अस्पताल' बनवाया था जिसका उद्घाटन लेडी कर्जन (वाइसराय लार्ड कर्जन की पत्नी) ने 1902 में किया था।
53. भगवानदासजी बागला की छतरी का लेख–वि.सं. 1952।
54. यह पक्का तालाब आज से कोई 200 वर्ष पूर्व गऊ–घाट सहित चूरू के जौहरीमल पौद्दार द्वारा बनवाया गया था। इसके पायतण के चारों ओर पक्की दीवार थी एवं इसमें स्वच्छ जल भरा रहता था। बाद में पायतण के टूट जाने पर इसमें नगर का गंदा पानी भरने लगा। तालाब की पूर्वी पाल पर एक बन्दर की यादगार में बनाई हुई गुमटी है एवं पश्चिमी की तरफ पौद्दारों के शमशान हैं जिनके चारों ओर पक्की दीवार बनी हुई है।
55. जोहड़ा – तालाब।
56. जगमणदासजी छतरी लेख–वि.सं. 1916।
57. आशारामजी लोहिया की छतरी का लेख – वि.सं. 1916।
58. जोखीरामजी लोहिया की छतरी का लेख – वि.सं. 1916।
59. यति ऋद्धिकरणजी की छतरी का पादुकालेख – वि.सं. 2000।
60. जालीरामजी पोद्दार की छतरी का लेख – वि.सं. 1890।
61. जालीरामजी पोद्दार की छतरी का लेख – समत 1912, जो काली स्याही से लिखा है।
62. जालीरामजी पोद्दार की छतरी का लेख – समत् 1933 जो काली स्याही से लिखा है।
63. ये लोग जाति से केडिया है, लेकिन ग्राम टाईं से आकर बसने के कारण टाईं वाला भी कहलाते हैं। इनके कुछ परिजनों की छतरी भगवानदासजी बागला के डंडे में खड़ी है। इस छतरी से पूर्व की ओर कुछ दूरी पर रामजसराय केडिया का कुआं, कुएँ की बाड़ी, धर्मशाला, बालाजी के 2 मंडप एवं केडियों की सती का स्थान है।
64. अधिकतम छतरियों के लेख छतरी की पश्चि मी भित्ति पर प्राप्त हुये है लेकिन इसमें उत्तराभिमुख लेख प्राप्त हुआ है।
65. सुखरामजी टाईं (केडिया) की छतरी, वि.सं. 1946, लेख में नीचे उर्दू में हस्ताक्षर है।
66. सुखरामजी टाईं की छतरी, वि.सं. 1958, जो काली स्याही में लिखे हैं।

❑❑❑

समीक्षा : जोधपुर राज्य के अस्त्र-शस्त्र

लेखक : डॉ. विक्रम सिंह भाटी

राजा-महाराजाओं का काल युद्धों का काल रहा है और प्रारंभिक काल से ही युद्धों को नवीन तकनीकों व कुशल हथियारों के आधार पर विजित करने का प्रयास किया जाता था। भारतवर्ष में प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक विविध शैली के अस्त्र-शस्त्रों की लम्बी श्रृंखला अस्तित्व में रही है। इनकी महती उपयोगिता के कारण ही अनेक भारतीय ग्रंथों में इनके निर्माण, प्रकार, रख-रखाव एवं कुशल संचालन की जानकारी के विवरण समाहित हैं।

इसी अनुक्रम में, डॉ. विक्रम सिंह भाटी मध्यकाल के दौरान जोधपुर राज्य में यौद्धिक दृष्टि से विशिष्ट प्रचलन में रहने वाले हथियारों की विशद चर्चा अपनी पुस्तक **'जोधपुर राज्य के अस्त्र-शस्त्र'** में करके सैन्य इतिहास लेखन करने वालों की श्रेणी में सम्मिलित हो गये हैं।

इस पुस्तक में कुछ हथियारों के बारे में विस्तृत उल्लेख किया गया है तथापि बहुत से महत्त्वपूर्ण हथियारों को उपेक्षित भी कर दिया गया है परन्तु इसके उपरांत भी इस पुस्तक की महत्ता कमतर नहीं आंकी जा सकती है, क्युंकि इस पुस्तक में संगृहीत सूचनाओं का मूल आधार तत्कालीन राजकीय दस्तावेज एवं मेहरानगढ़ किले में संरक्षित एवं संग्रहित हथियारों का सर्वेक्षण रहा है।

विक्रम सिंह भाटी ने इस पुस्तक में राजपूतों द्वारा उपयोग में लिए जाने वाले हथियारों की विशद् चर्चा की है, जिनमें उनके अध्ययन का केंद्र बिंदु जोधपुर (मारवाड़) राज्य रहा है। हालाँकि लेखक का यह प्रयास किसी प्रकार का गूढ़ शोध कार्य नहीं है बल्कि शस्त्रादि से सम्बंधित विभिन्न उपयोगी सूचनाओं का संकलन है जिन्हें एक स्थान पर एकत्र कर पुस्तक का रूप प्रदान किया गया है। इस पुस्तक की महत्ता इसलिए अधिक बढ़ जाती है क्योंकि लेखक पुस्तक के लेखन के दौरान मेहरानगढ़ दुर्ग स्थित मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोध केन्द्र में कार्यरत थे, अतः उन्होंने संस्थान में संग्रहीत पुरा-दस्तावेजों का व्यक्तिशः अध्ययन किया एवं दुर्ग में संरक्षित हथियार श्रृंखला का सर्वेक्षण कर तथ्यों की प्रमाणिकता को सिद्ध किया।

लेखक ने इस पुस्तक को समग्र रूप से कुल नौ अध्यायों में विभाजित किया है। यह पुस्तक 18वीं सदी से लेकर 20वीं सदी तक प्रचलन में रहे अस्त्र-शस्त्रों व अन्य सुरक्षात्मक उपकरणों का विश्लेषणात्मक विवरण प्रस्तुत करती है। इस पुस्तक में जोधपुर महाराजा विजय सिंह (1752-1793 ई.) से लेकर महाराजा सरदार सिह (1895-1911 ई.) तक के शासनकाल के दौरान निर्मित हथियारों व *सिल्हेखाना* (शस्त्रागार) की गतिविधियों की महत्त्वपूर्ण जानकारी समाहित है।

इस पुस्तक की मुख्य विशेषता यह है कि इस पुस्तक के लेखन से पूर्व लेखक ने मानसिंह पुस्तक प्रकाश में संगृहीत अस्त्र-शस्त्र से सम्बद्ध राजकीय बहियों व अन्य दस्तावेजों का गहन अध्ययन किया है, इनमें *सिल्हेखाना,* कपडे के कोठार व सोने-चांदी के लेन-देन से सम्बंधित अनेक बहियां यथा- *कपड़ा रा कोठार तालके रो खातो, कपड़ा रा कोठार तालके रो रोजनावो, कपड़ा रा कोठार सिल्हेखाने री बही, कपड़ा रा कोठार तालके हथ बही, जवाहरखाना एंड मिंट, सोना तथा रूपा री बही, जवाहरखाना री जमा खरच री हथ बही, वागा रा कोठार री बही, कपड़े रे कोठार री बही, सिल्हेखाना तालके जमा खरच री बही-मोचियों री वगेरे, खासे पेटी तालके जुवार तथा सोना रकमा री बही* तथा *सावा बही* मुख्य रूप से है, इन बहियों की शृंखला से अनेक बहियों का उपयोग इस पुस्तक के लेखन में किया गया है। यह महत्त्वपूर्ण है कि इस पुस्तक के माध्यम से शोधार्थी अस्त्र-शस्त्रों से सम्बद्ध स्रोतों की नई एवं लम्बी शृंखला से परिचित होंगे। लेखक ने राजकीय दस्तावेजों में उल्लेखित हथियारों की लम्बी सूची तैयार कर मेहरानगढ़ दुर्ग में स्थित *सिल्हेखाने* में संगृहीत अस्त्र-शस्त्रों से उसका मिलान किया, इससे इस पुस्तक की प्रमाणिकता सिद्ध होती है।

डॉ. भाटी ने उन विभिन्न जाति के मिस्त्रियों, कारीगरों, मजदूरों तथा अन्य कार्मिकों का भी विवरण दिया है, जो अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण कार्य में संलग्न थे। *सिल्हेखाने* के साथ-साथ *किलीखाने* में भी हथियारों का निर्माण किया जाता था, हथियारों के निर्माण में मुख्य रूप से लुहार, सिकलीगर, सीरवी, जीनगर, सुथार, सुनार व मोची आदि की भूमिका उल्लेखनीय थी। उक्त दस्तकारों में लुहार व सिकलीगर लौह व अन्य धातुओं से तलवारों, भालों, ढालों, बंदूकों तथा तोपों का निर्माण व उनकी मरम्मत करते थे। जीनगर जाति के लोग तलवार की म्यान पर चमड़ा चढ़ाने और उनकी सिलाई करने का कार्य करते थे। सुथार द्वारा उत्तम किस्म की लकड़ी का चयन करके तलवार की म्यान बनाने का तथा सुनार द्वारा तलवारों की *मूठ, साज* व *तहनाल* पर सोने-चांदी का कार्य किया जाता था। बंदूकों की कोठी व तलवारों की म्यान बनाने के लिए सांभर नामक पशु की उत्तम दर्जे की खाल की खरीद मोचियों से की जाती थी। इस कालखंड के दौरान प्रति नग हेतु 32 रूपये भुगतान किये जाने का उल्लेख मिलता है। म्यानगर में काम करने के लिए बड़ी संख्या में मोचियों की नियुक्ति की जाती थी।

पुस्तक का मुख्य आकर्शण तलवारों पर विशेष जानकारी उपलब्ध करवाना प्रतीत होता है। इसके अनुसार तलवारों के कई प्रकार इतिहास पुरुषों के नाम के साथ भी जुड़े हुए देखे गए है उदाहरणार्थ राव अमरसिंह राठौड़ की अमरेश कटारी, अखेराज सोनगरा की भुजंग तलवार, गोपालदास उहड़ की सांकेला तलवार, गोयंददास भाटी की रणतल तलवार, राव चंद्रसेन की सीसहार तलवार तथा राव मालदेव की पतळ तलवार आदि। इसी प्रकार मारवाड़ के शासकों के नाम से भी तलवारों के नाम प्रचलन में आये, जिसमें जसवंतशाही तलवार, अजीतशाही तलवार, बख्तशाही तलवार तथा मानशाही तलवारें मुख्य थीं। लेखक ने सामान्य

रूप से प्रचलन में रहने वाली तलवारों में *तेगा, शमशीर, पताह, कीरच* तथा *नागपेची* आदि का उल्लेख किया है। इसी श्रेणी में सिरोही की तलवारें भी अपनी विशिष्ट पहचान रखती थी।

शस्त्र श्रेणी में तलवारों के अतिरिक्त *कटारिया, छुरिया, पेशकब्ज* एवं अस्त्रों में भालों व बंदूकों आदि से सम्बद्ध भी संक्षिप्त बल्कि महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है। लेखक ने *सिल्हेखाने* में बनने वाली विभिन्न प्रकार की छोटी-बड़ी बंदूकों के निर्माण व मरम्मत की विस्तृत जानकारी दी है। जोधपुर, नागौर, मेड़ता तथा कुचामन में बंदूकों का निर्माण *किलीखाने* में लुहारों व सिकलीगरों द्वारा किया जाता था। कुचामन में टोटादार बंदूकें विशेष रूप से बनाई जाती थी। बंदूकों के तत्कालीन रख-रखाव की प्रक्रिया पर भी जानकारी पुस्तक में देखने को मिलती है। बंदूकों की गोलियां सीसे की बनती थी एवं गोलियां डालने के लिए *पड़काला* वस्त्र एवं *मोम* की थैलियाँ काम में ली जाती थी।

डॉ. भाटी राजस्थानी भाषा व मुड़िया लिपि के अच्छे जानकार हैं साथ ही तत्कालीन मौद्रिक व्यवस्था की भी अच्छी परख रखते हैं। इसीलिए इस पुस्तक में तत्कालीन तकनीकी शब्दों का भी उन्होंने बड़ी मात्रा में उपयोग किया है एवं *सिल्हेखाना* में हथियारों के निर्माण व खरीदारी के लिए होने वाले खर्च को भी विस्तारपूर्वक समझाने का प्रयास किया है। पुस्तक के उल्लेख के अनुसार लुहारों तथा सिकलीगरों को तलवारों, ढालों व बंदूकों की मरम्मत हेतु प्रतिदिन क्रमशः 2 टका एवं 1 टका वेतन दिया जाता था। इसी प्रकार सुथार, सुनार व मोची को विभिन्न कार्यों के लिए दिए जाने वाले वेतन का भी उल्लेख प्राप्त होता है।

इसी दृष्टिकोण से यदि इस पुस्तक के नकारात्मक पहलुओं पर दृष्टिपात किया जाए तो हम पाते हैं कि वस्तुओं के मूल्य एवं हिसाब-किताब का विवरण यदि तत्कालीन लेखन शैली में ही दिया जाता तो इसकी उपयोगिता और अधिक बढ़ जाती साथ ही शोधार्थियों को भी तत्कालीन मौद्रिक व्यवस्था को समझने में सहायता मिलती। एक अन्य कमी यह कही जा सकती है कि लेखक ने बहियों में प्रयुक्त कठिन राजस्थानी शब्दावली का इस पुस्तक में बहुतायत उपयोग किया है परन्तु उन्हें बिना शब्दकोष के समझ पाना सरल नहीं है। यदि लेखक इन शब्दों के शब्दार्थ भी यथा स्थान पर दे देते तो पुस्तक के सुधी पाठकों की रुचि इसमें बनी रहती और शोध की दृष्टि से यह लेखक का एक श्रेष्ठ प्रयास होता। डॉ. भाटी की पुरालेखीय दस्तावेजों की परख एवं मारवाड़ की भूमि से जुड़े होने के कारण यहां की तत्कालीन सैन्य सुदृढ़ता के विविध पक्षों को जानने की वैयक्तिक अभिरूचि ने इस पुस्तक के लेखन का मार्ग प्रशस्त किया। मध्यकालीन मारवाड़ राज्य की सैन्य व्यवस्था पर शोध करने वाले शोधार्थियों के लिए यह पुस्तक एक प्रमाणिक आधार-स्रोत सिद्ध होगी एवं उनके शोध को अवश्य ही नई दिशा प्रदान करेगी।

समीक्षक : डॉ. राजेन्द्र कुमार
संकाय सदस्य, इतिहास विभाग
महाराजा गंगासिंह विवि, बीकानेर

प्रकाशक : महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोध केन्द्र, मेहरानगढ़ दुर्ग, जोधपुर एवं रॉयल पब्लिकेशन, जोधपुर, मूल्य दो सौ पचास रुपए मात्र।